ISSN 2277-7660

पर्यावरण संरक्षण को समर्पित एक अनूठी पारिवारिक, सामाजिक, साहित्यिक एवं आध्यात्मिक मासिक पत्रिका

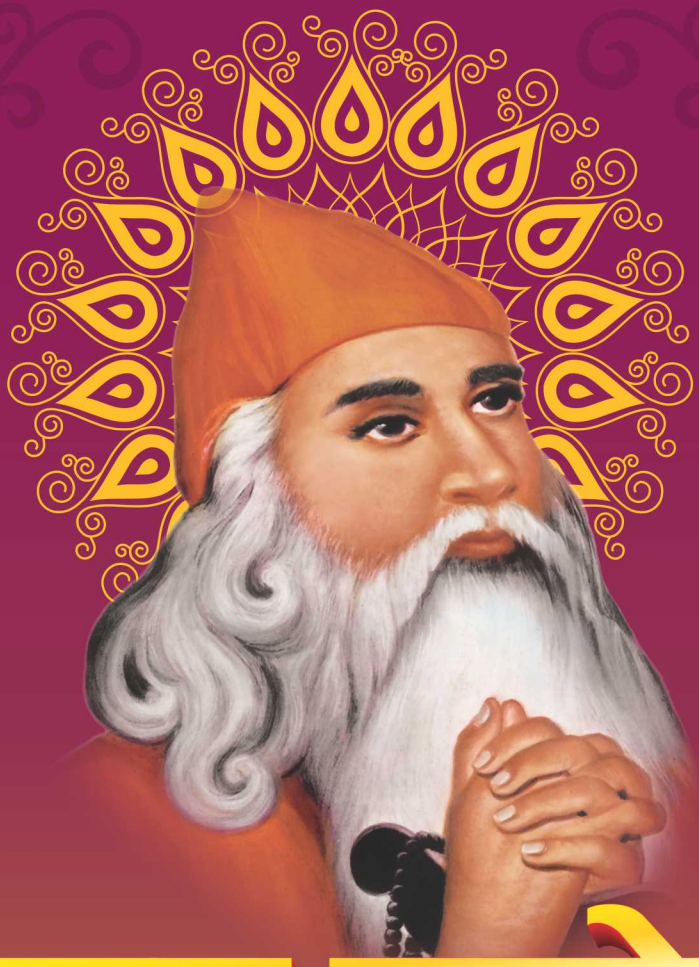

अमर ज्योति

नव वर्ष 2026 की हार्दिक शुभकामनाएं

वर्ष : 77 | जनवरी, 2026 | अंक : 1 | मूल्य : 200 रु. (वार्षिक)

प्रकाशक :
बिश्नोई सभा, हिसार

संपादक
डॉ. माया बिश्नोई

व्यवस्थापक
रामनिवास सिहाग
दूरभाष : 81681-78429
94670-90729

कार्यालय पता :
'अमर ज्योति'
श्री बिश्नोई मन्दिर
हिसार - 125 001 (हरियाणा)

email: editoramarjyotipatrika@gmail.com
editor@amarjyotipatrika.com
Website : http://amarjyotipatrika.com

सभा कार्यालय दूरभाष :
फोन : 01662-225804

इस पत्रिका में उल्लेखित सभी पद (व्यवस्थापक के अतिरिक्त) अवैतनिक एवं निष्काम सेवार्थ हैं।

सदस्यता शुल्क :
वार्षिक : ₹ 200
25 वर्ष : ₹ 1300

"अमर ज्योति में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के वैयक्तिक हैं। संपादक का इनसे सहमत या असहमत होना आवश्यक नहीं है। लेख संबंधी आपत्तियों हेतु सीधे लेखक से सम्पर्क करें"

सभी विवादों का न्यायक्षेत्र हिसार न्यायालय होगा।

'अमर ज्योति' का ज्ञान दीप अपने घर आँगन में जलाइये।

विषय अनुक्रमणिका

विषय		पृष्ठ
सबद-38-39		3
संपादकीय		4
साखी		5
कविता: नया साल, नई उम्मीदें	*दिव्यानी बिश्नोई*	6
ताका-झांकी	*संगीता सुनील बिश्नोई*	6
जन्म कर्म च मे दिव्यम्	*कृष्णानन्द आचार्य*	7
हरित आस्था की विरासत गुरु जंभेश्वर जी की पर्यावरणीय नैतिकता और अमृता देवी का बलिदान	*सुभाषचंद्र बिश्नोई*	11
कविता: एक सपना	*रेणु शर्मा*	15
सबदवाणी और मनुस्मृति: मानव मन की आचार-संहिता	*डॉ. कृष्णलाल बिश्नोई*	16
श्री जंभेश्वरजी ने बरसिंह जी को कहा 22वाँ सबद	*पृथ्वीसिंह बैनीवाल*	22
बधाई संदेश		23
कविता: सुर और साधना	डॉ. दवीना ठकराल	23
संयुक्त परिवार और बिखरते रिश्तों की दास्ता	*रेखा बिश्नोई*	24
वैष्णव परंपरा में गुरु जांभोजी और बिश्नोई धर्म का स्थान	*डॉ. राजा राम*	26
पढ़ ले गुण ले सबदवाणी	*बनवारी लाल बिश्नोई*	31
धार्मिक अनुष्ठानों के बिश्नोई लोकगीतों में संस्कृति चित्रण	*डॉ. बनवारी लाल सहू*	32
मधुर वाणी	*अश्वनी साँवक*	34
जीवन और अनुशासन	*डॉ. सत्यपाल शर्मा*	35
संत कवि केसोजी गोदारा (सन् 1573-1679)	*मनोहर लाल गोदारा*	38
वैचारिक भावों से उत्पन्न वातावरण ही स्वर्ग व नर्क	*हरिओम बिश्नोई*	39
कोरोना काल में हिदायतें और बिश्नोई धर्मपंथ का धर्म नियम	*मा. मोतीराम कालीराणा*	40
मैं 'खेजड़ी' एक कल्प वृक्ष हूँ	*श्रीराम गोदारा बिश्नोई*	42

सबद- 38, 39

दोहा

गुंसाई एक आय के, बोला ऐसी बात।
ठुमरा पहरा गले में, भेख हमारा साच॥

एक गुंसाई साधु ने आकर श्री देवजी से कहा कि आपके पास कोई साधुता का चिह्न जैसे ठुमरा, कंठी, माला, तिलक आदि नहीं है। बिना चिह्न के हम आपको कौन से पंथ का साधु स्वीकार करें। मेरे गले में तो आप देखिये यह ठुमरा पहना हुआ है। मेरा भेख ही सच्चे साधु का है। इसलिये मैं तो सच्चा साधु ही हूँ। जम्भदेव जी ने उनके प्रति सबद कहा-

सबद-38

रे रे पिण्ड स पिण्डूं, निरघन जीव क्यूं खंडूं, ताछै खंड बिहंडूं।

भावार्थ- अरे गोंसाई! जैसा तुम्हारा यह पंचभौतिक पिण्ड अर्थात् शरीर है वैसा ही अन्य सभी जीवों का शरीर है। कोई ठुमरा, माला, तिलक से शरीर में परिवर्तन आने वाला नहीं है। हे निरघृण! तूने इस पार्थिव दुर्गन्धमय शरीर को ही संवारा इसी को ही महता दी है तथा इसमें रहने वाले जीव को खण्डित कर दिया है। इसकी अवहेलना कर दी है। इसलिये तेरा जीवन खण्डित होकर टुकड़े-टुकड़े हो चुका है। तुमने स्वयं ही अपनी हत्या कर डाली है।

घड़िये से घमण्डूं, अइयां पन्थ कु पन्थूं, जइयां गुरु न चीन्हों। तइयां सींच्या न मूलूं, कोई कोई बोलत थूलूं।

तुमने परम तत्त्व की खोज तो नहीं की परन्तु कच्चे घड़े सदृश इस शरीर पर ही अभिमान किया। यह सदपंथ नहीं कुपंथ है। इस मार्ग से तो तुम मुक्ति को प्राप्त नहीं कर सकोगे। यदि गन्तव्य धाम को पहुँचना है तो गुरु के बताये हुए मार्ग का अनुसरण करो। उस परम तत्त्व की खोज करो यही मूल है। कुछ लोग तो स्वयं को ही सिद्ध बताकर भी स्थूल ही बोलते हैं।

★★★★

दोहा

तब ही आयस यूं कही, जम्भगुरु सूं बात।
जोग जुगत श्रीय हुवै, हमें बतावो तात।

ऊपर के सबद को श्रवण करके वह गोंसाई कहने लगा-कि हे देव! हमें आप ही योग की युक्ति बतलाइये जिससे हमारा कल्याण हो सके। श्री देवजी ने इस प्रकार से सबद सुनाया-

सबद-39

उत्तम संग सूं संगूं, उत्तम रंग सूं रंगूं, उत्तम लंग सूं लंगूं।

भावार्थ- यदि तुम्हें भवसागर से पार होना है तो सर्वप्रथम तुम्हारा कर्तव्य बनता है कि उत्तम संगति करना। उत्तम पुरुष के साथ वार्तालाप करना ही अच्छा संग है और यदि कोई रंग ही अपने उपर चढ़ाना है तो वह भी उत्तम ही ग्रहण करना अर्थात् यदि अपने जीवन को शुद्ध संस्कारित करना है तो अच्छे संस्कारों को ही धारण करना। संसार से पार लांघना है तो फिर वापिस मृत्यु-जन्म के चक्कर में न आना पड़े। ऐसा उत्तम लोक ही प्राप्त करना। जो भी शुभ कार्य करना हो तो पूर्णता से करना। अधूरा किया हुआ कर्तव्य बीच में ही लटका देता है।

उत्तम ढ़ंग सूं ढ़ंगूं, उत्तम जंग सूं जंगूं, तातै सहज सुलीलूं। सहज सुं पंथूं, मरतक मोक्ष दवारूं।

जीवन जीने का ढंग भी यदि उत्तम शालीनता से हो तो वही जीना है। यदि तुम्हें युद्ध ही करना है अर्थात् मन इन्द्रिय बलवान शत्रु है इन्हें जीतना ही उत्तम जंग है इससे तुम्हारे जीवन में सहज ही सुलीला का अवतरण होगा, यानि तुम्हारा जीवन आनन्दमय हो जायेगा। यही सहज सुमार्ग है। इसी मार्ग पर चलने से मृत्यु काल में मोक्ष की प्राप्ति होगी।

-साभार 'जम्भसागर'

संपादकीय

नववर्ष अभिनन्दन

भारत में नववर्ष को अनेक नामों और परम्पराओं के साथ नई आशाओं, उम्मीदों और जिज्ञासाओं के साथ मनाया जाता है। नववर्ष 2026 का खुशियों के साथ आगमन हो चुका है। नववर्ष केवल एक नई तिथि का आरम्भ नहीं है, बल्कि यह धर्म, प्रकृति और जीवन मूल्यों से जुड़ा एक गहरा विशेष अवसर है। नववर्ष नए आरम्भ, नई ऊर्जा और नई सोच का प्रतीक है। हिन्दू मान्यताओं के अनुसार इसी दिन भगवान ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना आरम्भ की थी। इसलिए नववर्ष को सृष्टि के आरम्भ का दिन भी कहा जाता है। कई धार्मिक ग्रन्थों में इसका विशेष उल्लेख मिलता है। इस दिन लोग प्रात: स्नान कर पूजा-पाठ करते हैं। परिवार के साथ मंगलकामनाएं साझा करते हैं और नए जीवन की शुभता के साथ शुरूआत करते हैं।

नववर्ष के आगमन पर व्यक्ति अपने बीते वर्ष के अच्छे व बुरे कार्यों पर विचार कर आत्ममंथन करते हैं और आने वाले नववर्ष के लिए अपने जीवन में सुख, शांति, समृद्धि व सुधार लाने, अच्छे कार्य करने और नकारात्मक आदतों को छोड़ने का दृढ़ संकल्प लेते हैं। भारतीय परंपरा में संकल्प को बहुत महत्व दिया गया है, क्योंकि यह व्यक्ति को सही दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा जो देता है। भारतीय संस्कृति में समय को केवल गणना की इकाई नहीं, बल्कि जीवन का प्रवाह माना गया है। इसी कारण नववर्ष का स्वागत धार्मिक, सामाजिक और प्राकृतिक सभी स्तरों पर किया जाता है। यह वह समय होता है जब प्रकृति भी नए रूप में दिखाई देती है। ऋतु परिवर्तन भी होता है, बसंत ऋतु के आगमन के साथ नई चेतना दिखाई देती है। पेड़-पौधों पर नई कोपलें, खेतों में हरियाली और वातावरण में ताजगी सब मिलकर नववर्ष के संदेश को और गहरा व सुगन्धित बना देते हैं जिससे धरती में नई ऊर्जा का संचार होता है। जो मनुष्य रूपी जीवन के आंचल को खुशियों से भर कर आपसी मेलजोल बढ़ाने का अवसर देता है। वहीं परिवार, पड़ोसी व मित्र एक-दूसरे को शुभकामनाएं देते हैं। जिसके माध्यम से हमारी परम्पराएं नई पीढ़ी तक पहुंचती हैं।

सामाजिक दृष्टि से नववर्ष का बिश्नोई समाज में भी विशेष महत्व रहता है। बिश्नोई समाज, जो भगवान जम्भेश्वर जी द्वारा स्थापित 29 धर्म नियमों पर आधारित है, जो नववर्ष को आत्मशुद्धि, प्रकृति संरक्षण और सामाजिक सद्भाव के भाव के साथ देखता है। यह समाज हमेशा से प्रकृति और मानव जीवन के संतुलन को सबसे ऊपर मानता आया है और नववर्ष इसी संतुलन को नए सिरे से अपनाने का समय होता है। बिश्नोई समाज में नववर्ष प्राय: चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से जुड़ा माना जाता है, जो हिन्दू नव संवत्सर का प्रारम्भ है। नववर्ष के दिन समाज के लोग प्रात: स्नान आदि करके भगवान जम्भेश्वर जी का स्मरण सबदवाणी के 120 सबदों के साथ हवन यज्ञ आदि करके करते हैं। जो हमें अपने मूल सिद्धांतों की याद दिलाने, जीवन को नए रूप में आगे बढ़ाने, संयम, सेवा और सादगी लाने का एक माध्यम है। इस अवसर पर समाज के लोग एक-दूसरे से मिलते हैं, बुजुर्गों का आशीर्वाद लेते हैं और युवाओं को धर्म संस्कृति से जोड़ने का प्रयास करके उन्हें सामाजिक जिम्मेदारियों से परिचित करवाते हैं। ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए हमारा युवा एक आदर्श प्रेरणा स्रोत व सही मार्गदर्शक बनें, जिससे समाज और अधिक विशिष्ट व सशक्त बने।

आज के समय में जीवन तेज गति से बदल रहा है, तब नववर्ष हमें ठहरकर सोचने का अवसर देता है। यह याद दिलाता है कि प्रगति के साथ-साथ अपनी संस्कृति और मूल्यों को संभालकर रखना भी जरूरी है। नववर्ष हमें प्रकृति के साथ तालमेल बिठाकर जीने, संतुलन बनाए रखने और सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने की सीख देता है।

अंतत: नववर्ष हम सबके लिए आशा, विश्वास और नए सपनों का पर्व है। यह हमें सन्देश देता है कि हर अंत के बाद एक नई शुरूआत संभव है। यदि हम इस दिन को केवल औपचारिकता तक सीमित न रखकर इसके भाव को अपने जीवन में उतारें, तो वास्तव में नववर्ष हमारे लिए सार्थक बन सकता है। यही नववर्ष की सच्ची भावना है। इन्हीं विचारों व मनोभावों के साथ नववर्ष के शुभ आगमन पर अमर ज्योति पत्रिका परिवार सुधी लेखकों, रचनाकारों, कविवर, हितधारकों व प्रिय पाठकों की सुख-समृद्धि, सम्पन्नता, खुशहाली व निरोगी काया के लिए हार्दिक शुभकामनाएं देता है।

ईश्वर करे यह साल आपके लिए मंगलमय हो। आनन्द से भरा हो, नया सवेरा, नई किरण के साथ, नया दिन उत्साह और ऊर्जा के साथ आपके सपनों को साकार करें।

रायचंद सुथार कृत साखी छन्दां की

कलयुग तीर्थ थापियो, भाग परापति पावियो।
देश फलोदी मंझ थप्यो, पाप न रहसी परसियां।
जाय परसो विसन तीर्थ, सिर सूं माटी काढ़ियो।
तेरा हुवै पहला पाप खंडत, सुरग में सुख लाडियो।
कह रायचन्द सत्य जांणो, पाप न रहसी प्राणियां।
अवतार जम्भ नरेश नै, कलि मंझ तीर्थ थापियां।1।
जिस भूमि पाण्डवां जिग रच्यो, तहां सूत फिराइये।
जहां सहदेव जी तीर्थ थाप्यो, जीवड़ा काजै न्हाइये।
जीव काजै काढ़ माटी, पाल पै परवाहिये।
तेरा हुवै आवागवण खंडत, मुक्ति निहचय पाविये।
कह रायचंद सत्य जाणों, उस तीर्थ में जाइये।
जिस भूमि पाण्डवां जिग रच्यो, जहां सूत फिराइये।2।

भावार्थ– गुरु जम्भेश्वर जी ने कलयुग में आकर दिव्य तीर्थ जाम्भोलाव की स्थापना की है। यह इस देश के लोगों के लिये गंगा के समान ही है परन्तु कोई भाग्यशाली ही इस तीर्थ की महिमा को समझेगा तथा स्नान स्पर्श करेगा। यह तीर्थ फलोदी देश की भूमि में थरपा गया है जो भी स्पर्श करेगा उसके सभी पाप निवृत हो जायेंगे। इसलिये हे भक्तो! ऐसे तीर्थ में अवश्य ही पहुंचो तथा दर्शन स्पर्श करो एवं तालाब की मिट्टी सिर पर रखकर निकालो। तुम्हारे पिछले जन्मों के पाप खण्डित हो जायेंगे तथा स्वर्ग में सुख प्राप्त कर सकोगे। रायचन्द कहते हैं कि यह सिद्धान्त सत्य मानो कि पापी जनों के पाप नहीं रह सकेंगे। जम्भेश्वर जी इस समय मानवों के स्वामी हैं। उन्होंने ही अवतार लेकर इस फलोदी देश में तीर्थ की स्थापना की है।1।

इस भूमि पर पाण्डवों ने वनवास काल में निवास किया था और अनेकों यज्ञ की रचना की थी। उन्होंने इस भूमि की पवित्रता को जाना था। आप भी जानिये और यहां आकर सूत फिराइये। अर्थात् कपड़ा तालाब के चारों तरफ बिछाकर दान कर दीजिये, यही यहां का महात्म्य है। यहां पर प्रदान किया हुआ वस्त्र दान अनन्त गुणा फल देता है। ऐसा द्रौपदी ने यहां वस्त्र दान

सो पुनि अड़सठ तीर्थ थाप्यो, विसन तालाब सत जाणिये।
जिस द्वारिका किसन रहे, मुक्ति हुवै गुरु बाणियें।
गुरु वचने मुक्ति लाभे, उस तीर्थ में जाइये।
काशी बदरी और हर की पैड़ी, जाणि गंगा न्हाइये।
कह रायचन्द सत्य जांणो, कांय भूला मन हठे।
विसन तालाब तुम सत्य जांणो, और तीर्थ अड़सठे।3।
कलियुग परचो हाल लहो, कबूलो माटी निसारणी।
अंधा लोयण मिले सही, इच्छा करै मन बांझड़ी।
बांझ इच्छा विसन पुरै, उस तीर्थ निश्चय जाइये।
निसार माटी करो पूजा, निवत साधु जिमाइये।
साथरी गुरु को इसो तीर्थ, जाय कंध निवाइये।
कर जोड़ि रायचंद कहै, विनती हाल परचो पाइये।4।

दिया था। जिससे द्रौपदी का चीर अनन्त गुणा बढ़ गया था। यहां पर सहदेव जी ने अपनी विद्या के बल से पता लगाया था और इस तीर्थ की स्थापना की थी। ऐसे तीर्थ में अवश्य ही स्नान कीजिये। इस जीव की भलाई के लिये तालाब से मिट्टी निकालें और ले जाकर पाल पर डालें। तुम्हारे सभी अवगुण खण्डित हो जायेंगे तथा मुक्ति की प्राप्ति होगी। रायचन्द जी कहते हैं कि यह सत्य वार्ता है, अवश्य ही समझो और ऐसे तीर्थ में जाओ। जिस भूमि में पाण्डवों ने यज्ञ रचा था, वहीं जाकर सूत फिरावे, वस्त्र दान दें।2।

वही जाम्भोलाव अड़सठ तीर्थों का फल देने वाला है, जिसकी स्थापना कलयुग में स्वयं विष्णु ने की है, ऐसा अवश्य ही जानें। जिस द्वारिका में कृष्ण रहे थे जिससे वह तीर्थ बन गया। उसी प्रकार जाम्भोलाव पर भी स्वयं भगवान विष्णु ने निवास किया था। इसलिये यह भी द्वारिका की भांति तीर्थधाम है। यहां पर गुरुवाणी का श्रवण होगा जो मुक्ति देने वाली है। गुरु के वचनों का पालन करने से मुक्ति मिलती है, ऐसे दिव्य तीर्थ में अवश्य ही जाना चाहिये। काशी, बद्रीनाथ, हरि की पैड़ी की भांति ही यहां पर भी इसे गंगा मानकर स्नान करें। रायचंद जी कहते हैं कि इस

बात को सत्य मानों। क्यों मनहठ के वशीभूत होकर भूल गये हो। इस जाम्भोलाव को विष्णु का ही तालाब मानकर स्नान कीजिये, इससे अड़सठ तीर्थों का फल मिलेगा।3।

इस कलयुग में तो साक्षात परचा देने वाला यह तालाब है। पहले मिट्टी निकालने की प्रतिज्ञा करो। आपका संकल्प पक्का होगा तो निश्चय ही आपकी इच्छा पूर्ति होगी। आपके दु:खों की निवृत्ति हो सकेगी क्योंकि यहां पर आकर संकल्प से मिट्टी निकालने से अन्धों को आँखें मिली हैं और बांझड़ी को पुत्र की प्राप्ति हुई है। इस प्रकार से अनेक इच्छाओं की पूर्ति करने वाले इस तीर्थ में अवश्य ही आइये। तालाब की मिट्टी निकालिये। विष्णु मन्दिर में पूजा हवन कीजिये तथा साधु संतों को निमन्त्रण देकर भोजन कराइये। यह गुरु की साथरी है, इसकी लीला अपरंपार है। यहां अवश्य ही नम्रता से सिर झुकाइये। हाथ जोड़कर रायचंद जी कहते हैं कि इस समय यहां पर अनेक दिव्य चमत्कार हो रहे हैं।4।

-साखी भावार्थ प्रकाश

नया साल, नई उम्मीदें

नई उमंग, नया उल्लास,
साल ये नया आया है।
बीत गए जो शिकवे-शिकायत,
उनको भुलाने आया है
देश-समाज करे प्रगति,
युवा हो नशा मुक्त।
बच्चे-वृद्ध सब मिलकर उठाएं,
इस नववर्ष का लुत्फ।
नए साल पर नई शुरूआत,
शिक्षा, स्वास्थ्य, खुशहाली की हो बात।
तारीख, महीना दिन सब है नया
2026 आ ही गया।
सब मिलकर करें नववर्ष का स्वागत
खुशियों की बस हो चाहत।
सूरज की नवीन किरणें,
चारों ओर फैला रही हैं उजियारा।
इस नूतन वर्ष में ढेर हो,
हमारे जीवन का अंधियारा।

-दिव्यानी बिश्नोई
हुबली, कर्नाटक

ताका - झांकी

दूसरों के परदों में झांकते-झांकते,
लोग ये भूल जाते हैं कि
उनके परदों में कब छेद हुआ,
और कब छलनी हो गया।
दूसरों के लिए अपनी विचारधारा,
बनाना बहुत आसान है,
पर वही विचारधारा अपने ऊपर
लागू करना बहुत कठिन।
हम उपदेश हमेशा दूसरों पर थोपते हैं,
अगर हम उन्हें स्वयं के जीवन में,
उतार लें तो किसी को भी,
उपदेश देने की जरूरत ही न होगी।

-श्रीमती संगीता सुनील बिश्नोई
गांव गाडरवारा,
जिला नरसिंहपुर (म.प्र.)

भगवान श्री कृष्ण ने गीता में कहा है कि हे अर्जुन! बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन। तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप।4,5। हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं। तू उन जन्मों को नहीं जानता किन्तु मैं जानता हूँ। मैं अजन्मा हूँ, अव्यय आत्मा हूँ, सभी भूत प्राणियों का ईश्वर भी हूँ फिर भी मैं अपनी त्रिगुणात्मिका माया प्रकृति को आधीन करके युगों-युगों में आता हूँ। जब-जब धर्म की हानि होती है और पाप की अभिवृद्धि होती है तब-तब में अपने आपको सृजित कर लेता हूं। यहां आकर साधु पुरुषों की रक्षा करता हूं और दुष्कर्मों का विनाश कर, धर्म की स्थापना करता हूँ। ऐसा युगों-युगों से करता आ रहा हूँ।

हे निष्पाप अर्जुन! मेरा जन्म और कर्म भी दिव्य अलौकिक है। जैसा संसार के लोगों का जन्म और कर्म प्रकृति के अधीन है वैसा मेरा नहीं है। क्योंकि प्रकृति मेरे अधीन है। मैं जैसा चाहूं वैसा रूप जन्म धारण कर लेता हूं। इसलिये मुझे तू संसारी मानव जैसा सामान्य न समझ। भगवान कहते हैं कि जो इस प्रकार से मुझे तत्व से जानता है, वही जानता है। वही ज्ञानी है वही मेरा सम्बन्धी है और मेरे में ही शरीर त्याग कर विलीन हो जाता है। इस प्रकार से भगवान कृष्ण ने स्वयं अपने जन्म और कर्म की दिव्यता बतलाई है।

इसी प्रकार से ही गुरु जाम्भेश्वरजी ने भी जोधपुर नरेश मालदेव को भी अपने जन्म कर्म की दिव्यता बतलाई थी।

नृप मालदेव आविया, देखण गुरु परताप।
मूलो पुरोहित संग है, कछु हेत कछु दाप।
पृथिपति पूछत भयो, हमें बतावो भेद।
आदि जु पहले कूण भयो, तां नही जांणत वेद।

सर्वप्रथम आदि में कौन था। जिसके बारे में वेद भी नहीं जानता है। उसका भेद हमें बतलाइये तब गुरु जाम्भेश्वरजी ने सबद 93 कहा-

ओम आद शब्द अनाहद वाणी, चवदै भवन रहया छल पाणी।
जिहि पाणी से इण्ड उपन्ना, उपन्ना ब्रहमा इन्द्र मुरारी।

आदि में तो एक ओम शब्द ही था। वही ओम अनाहद नाद वाणी के रूप में गुंजायमान था। उस समय तो '**जद पवन न होता पाणी न होता**' इत्यादि कुछ भी नहीं था। होता एक निरंजन शिम्भु '**के होता धन्धुकारू**' या केवल धन्धुकार ही था। गुरुदेव कहते हैं कि हम तो तब भी थे अब भी हैं फिर भी रहेंगे, कहो कद कद का विचार कहूँ। छतीस युगों की कहूं या उससे परे भी छतीस युगों की, समय का कोई अन्तपार ही नहीं है। सृष्टि के आदि काल से अब तक सभी को जानता हूँ। मैंने देखा है किन्तु तुम अल्पज्ञ जीव होने से नहीं जान सकते। मैं ईश्वर हूँ, इसलिए सभी कुछ जानता हूँ। दूसरा प्रश्न मालदेव ने फिर से पूछा-

अर्ज करी कर जोड़ के, प्रश्न राव मन मांय।
आदि पुरुष अपनी कहो, किते एक रूप धराय॥

गुरु जाम्भेश्वरजी ने सबद 94 कहा-

ओम सहमस्र नांव सांई भल शिम्भूं, म्हे उपन्ना आदि मुरारी।
जद म्हे रहयो निरालंभ होकर, उतपति धन्धूंकारी।
ना मेरे मायन ना मेरे बापन, म्है अपनी काया आप संवारी।
जुग छतीसूं शून्य ही बरत्या, सतयुग मांही सिरजी सारी।
ब्रहमा इन्द्र सकल जग थरप्या, दीन्ही करामात केती बारी।
चन्द सूर दोय साक्षी थरप्या, पवन पवनेश्वर पवन अधारी।

अर्थात् हमारे हजारों नाम हैं। हम सांई शिम्भूं हैं। हम तो आदि अनादि हैं। हमने ही आदि में

अंकल रूप मनसा उपराजी, तांमां पांच तत्व होय राजी।
आकास वायु तेज जल धरणी, तांमां सकल सृष्टि की करणी।
तां समरथ का सुणों विचार, सप्त दीप नवखंड प्रमाण।
पांच तत्व मिल इण्ड उपायो, विगस्यो इण्ड धरणी ठहरायो।
इण्डे मध्ये जल उपजायो, जलमां विष्णु रूप उपन्नों।
तां विष्णु को नाभ कमल विगसानो, तांमा ब्रहमा बिज ठहरानों।

तां ब्रहमा की उतपति होई, भानै घड़ै संवारे सोई।

सर्वप्रथम अकल यानि बुद्धि-ज्ञान एवं मन की उत्पति हुई थी। उसी ज्ञान में पांचों तत्व राजी हुए। जिससे आकास वायु तेज जल ओर धरणी की उत्पति हुई थी। उसी जल से सर्वप्रथम अण्डा उत्पन्न हुआ। उसी अण्डे में ब्रह्मा रूपी सृष्टि का बीज स्थापित किया था। उसी से ही ब्रह्मा जी की उत्पति हुई। वही ब्रह्मा ही उत्पति कर्ता बने और वही संहारकर्ता शिव रूप भी हुए वही पालण-पोषण कर्ता विष्णु भी बने। इस प्रकार से व्यक्ति एक कार्य तीन होने से तीन देवता प्रसिद्ध हुए। मरूभाषा में प्रकृति को बेहमाता-ब्रह्माजी भी कहते हैं। उसी बेहमाता का कार्य उत्पति का चल रहा हैं जिससे सम्पूर्ण सृष्टि की संरचना हो रही है।

यदि केवल उत्पति ही चलती रही तो संसार में सभी स्थिर हो जायेंगे, इसलिये संहारकर्ता की भी आवश्यकता होती है, वही संहारकर्ता महादेव शिव हैं। इन दोनों देवताओं से तो जीव का कोई खास प्रयोजन नहीं रहा। क्योंकि उत्पति हो चुकी संहार समय आने पर स्वत: ही हो जायेगा। उसकी हमें प्रतीक्षा नहीं है। मृत्यु तो महाभयंकर है उससे तो हमें बचना है। हमें तो 'जीवेम शरद शतम्' सौ वर्ष तक जीना है। केवल जीना ही नहीं है किन्तु कार्य करते हुए जीना है। इसके लिये हमें हमारे इष्टदेव श्री विष्णु का सहारा लेना है क्योंकि विष्णु ही पालन-पोषण कर्ता है। गुरु जाम्भोजी कहते हैं कि मैं यहां पर वही विष्णु ही आया हूँ। मेरा कार्य यहां पर विशेष रूप से पालण-पोषण करना ही है।

मेरे माता-पिता बहन भाई आदि कोई नहीं है। फिर भी मैं मानव शरीर धारी हूँ। इस मानव शरीर में बैठकर आप जनों को उपदेश दे रहा हूँ। क्योंकि आप लोग इस मानव शरीर की ही भाषा समझते हैं। आप लोगों से तुम्हारी मातृ भाषा में संवाद करने के लिये मैं, 'सबद श्री वायक' का उच्चारण कर रहा हूँ। मैंने अपनी काया को अपने ही आप अपनी इच्छानुसार धारण की है। '**प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्म मायया**' अपनी प्रकृति को अपने वशीभूत करके स्वयं ही मैं अपनी इच्छानुसार प्रगट होता हूँ। यानि अवतरित होता हूँ। यहां पर प्रगट होने का मेरा प्रयोजन भी है। '**तारणहार थलासिर आयो, जे कोई तिरै है सो तिरियो जीवनै**' साधु सज्जनों का परित्राण करने के लिये तथा दुष्टों का विनाश करने के लिये मेरा यहां पर आगमन हुआ है। 'गुरुमुख धर्म बखाणी' मैं यहां पर धर्म स्थापना हेतु आया हूँ। प्रह्लाद के बिछुड़े हुए बारह कोटि जीवों का उद्धार करना भी मेरा प्रयोजन है।

सुरगां होता शिम्भू आया, कहो कुणा के काजै।
नर निरहारी एकलवाई, प्रगट जोत विराजै।
प्रह्लादा सूं बाचा कीवी, आयो बारां काजै।
बारां मांसूं एक घटै तो, सू चेलो गुरु लाजै।

इस सृष्टि से पूर्व छत्तीस युग तो शून्य ही में व्यतीत हो गये। यहां कुछ भी नहीं था।

हिरण्यगर्भ समवर्ततााग्रे, भूतस्य जात: पतिरेक आसीत्।
सदाधार पृथिवी द्यावुताम्, कस्मै देवाय हविषा विधेम।

सृष्टि के पूर्व तो सभी जीव हिरण्यगर्भ कहे जाने वाले एक परमात्मा में ही समाहित थे। वही सम्पूर्ण चराचर प्राणियों का एक पति था। उसी ने ही पृथ्वी आदि का विस्तार किया था। उसी एक परमात्मा को छोड़कर हम किसे हवि प्रदान करें।

सर्वप्रथम सतयुग में सृष्टि का प्रारम्भ हुआ। ब्रह्मा शिव इन्द्र आदि प्रगट हुए। उन्हें उनकी योग्यतानुसार कार्य सौंपे गये। सभी प्राणियों में प्राण रूप से संचरण करने वाला वायु तथा सूर्य चन्द्र तारे धरती आकाश अग्नि आदि प्रगट किये। सूर्य चन्द्र तथा अमावस्या को साक्षी रूप से विद्यमान किये। एक पलक में सर्व संतोषा जीया जूण समाई, वह विष्णु एक पलक में सभी जीव प्राणियों के अन्दर समाहित होकर सबका पालन-पोषण करते हैं।

गुरु आप संतोषी अवरा पोखी, तंत महारस वाणी।

गुरु आप तो संतोषी हैं किन्तु दूसरों का पालन-

पोषण करने वाले हैं। वही विष्णु ही यहां सम्भराथल पर आये हैं।

इसी शब्द में आगे गुरुदेव बतलाते हैं कि जब हमने मत्स्य रूप धारण किया था, तब प्रथम युग सत ही था। उस प्रलयावस्था में सृष्टि के सम्पूर्ण बीजों की रक्षा मैंने की थी और सत्यव्रत राजा को ज्ञान दिया था। दूसरा अवतार धारण करके देव दानवों के समुद्र मंथन का कार्य करने में सहयोग प्रदान किया था। देव दानवों के अहंकार की निवृत्ति की थी और चौदह रत्न तथा अमृत की प्राप्ति देवताओं को करवायी थी। जब हमने तीसरा अवतार धारण करके जल में डूबी हुई धरती को जल से निकाल करके सर्वसुलभ करवायी थी और हिरणाक्ष का वध किया था।

जब हमने चौथा अवतार धारण करके प्रह्लाद भक्त की रक्षा की थी और नृसिंह रूप धारण करके हिरण्यकशिपु को मारा था। तेतीस कोटि प्रह्लाद के अनुयायियों को तारने का वचन दिया था।

पांचवा अवतार धारण कर, मैंने वामन रूप में आकर राजा बलि को चेताया था। सम्पूर्ण सृष्टि को तीन पैरों से नाप ली थी।

छठा अवतार धारण करके धर्म विरुद्ध आचरण करने वाले क्षत्रियों का विनाश परशुराम के रूप में आकर किया था।

सातवें अवतार में राम रूप धारण करके सिर पर राजमुकुट रखवाया। राजा प्रजा को मर्यादा सिखाई और राक्षसों का विनाश करके धरती पर पुनः धर्म की स्थापना की।

आठवां अवतार श्री कृष्ण के रूप में हुआ। वहां पर बंसी बजाई, गउवें चराई, कालीया नाग को नाथा, धरती को असुरों से रहित किया। अनेकों प्रकार की अदभुत लीलाएं की, दिव्य जीवन जीने की कला युक्ति मुक्ति का मार्ग बतलाया।

नवां अवतार बुद्ध रूप में था। बौद्ध गया में रहकर ज्ञान अर्जित किया। कामदेव तथा अंगुलिमाल जैसे दुर्दान्तजनों को शांत किया। जो लोग नास्तिक हो गये थे, धर्म के नाम पर अधर्म फैला रहे थे, उन्हें सद्मार्ग पर लाये। पंथ चलाया, राह दिखाया इस प्रकार से नौ वार विजय तो हमारी ही हुई।

गुरुदेव कहते हैं कि इन नौ अवतारों से जो कार्य नहीं हो सका था, अवशिष्ट रह गया था। उसे पूरा करने के लिये मुझे इस समय यहां पर आना पड़ा है। अति शीघ्र ही इस कार्य को पूरा करके चला जाउंगा। यहां पर भी कुछ पढ़े-लिखे पंडित काजी मूला आदि मुझे तत्व से नहीं जानते हैं, इसलिये गंवार लोग निंदा भी करते हैं। किन्तु हे लोगो! आप इनके भुलावे में नहीं आ जाना। यदि दुखमय जीवन छोड़कर सुख चाहते हैं तो हमारा कहा हुआ है, उसी का आचरण करें। तुम्हारा कल्याण निश्चित है।

जाम्भोजी के पास अनेकों हजूरी शिष्य रहा करते थे। उन्होंने जो कुछ भी प्रत्यक्ष देखा था वह अपनी वाणी द्वारा प्रगट किया था। वे ही आज हमारे पास साखियों आरतियों के रूप में विद्यमान हैं। उनमें से प्रत्यक्ष दृष्टा कवि उदोजी नैण को लेते हैं। उन्होंने जाम्भोजी के बारे में यथार्थ वर्णन किया है। उनके सम्पूर्ण साहित्य का विवेचन तो यहां नहीं किया जा सकता किन्तु उनकी एक आरती यहां पर जाम्भोजी को यथार्थ जानने के लिये पर्याप्त हैं-

आरती कीजै श्री जम्भगुरु देवा, पार नहीं पावै बाबो अलख अभेवा।
पहली आरती परम गुरु आये, तेज पुंज काया दरसाये।
दूसरी आरती देव विराजै, अनन्त कला सतगुरु छवि छाजै।
तीसरी आरती त्रिसूल ढापै, खुध्या त्रिसना निंद्रा नहीं व्यापै।
चौथी आरती चहूं दिस परसे, पेट पूठ नहीं सन्मुख दरसे।
पांचवी आरती केवल भगवंता, शब्द सुणायो जन परयंता।
उदो दासजी आरती गावै, श्री जम्भगुरुजी को पार नहीं पावै।

महमाई के भक्त उदोजी ने अपनी आंखों से देखा था कि जाम्भोजी प्रथम दर्शन में परमगुरु रूप मे तेज पुंज

काया में विराजमान हो रहे थे। दूसरी आरती में देवरूप से शोभायमान होते हुए शरीर की छाया माया से रहित होकर दर्शन दे रहे थे। तीसरी आरती में त्रिशूल अर्थात् भूख, प्यास और निद्रा से विमुक्त निराहारी निरंजन रूप से सर्वत्र व्यापक थे। चौथी आरती में चहूंदिस दर्शनीय मूर्तिमान दिव्य शरीरधारी थे, जहां देखे वही चारों तरफ मुख ही दिखलाई देता था। पांचवी आरती में केवल्य ज्ञानी भगवत रूप से दिव्य 'सबद श्री वायक' का उच्चारण कर रहे थे। जहां भी जिज्ञासु श्रोता थे वहीं तक सबद ब्रह्म रूपी वाणी सुनाई देती थी।

वे तो शब्द रूप से ही मानव रूप धर कर आये थे। उनका शरीर देव मानव का संयुक्त रूप था। '**सुरनर तणो संनेसो आयो, सांभलियो रे जाटों।**' इसलिये कहा जा सकता है कि जाम्भोजी परम गुरु रूप में थे। कैवल्य ज्ञान का उपदेश देते थे। उनकी वाणी सत्य तत्व को बताने वाली वेद वाणी थी। जो स्वत: ही प्रामाणिक थी और इस समय भी हैं, उनका शरीर तेजस्वी था जिस प्रकार से देवताओं का होता है। उसी प्रकार से उनके शरीर में छाया -माया नहीं थी। '**मोरे छाया न माया**', सभी अवतार कलाओं से नापे जाते हैं जैसे कृष्ण सौलह कला अवतार मान्य है किन्तु जाम्भोजी अनंतकला अवतारी थे।

अन्य प्रमाणों से भी पता चलता है कि जाम्भोजी भोजन नहीं करते थे तथा कहा भी है- '**भूख नहीं अन्न जीमत कौण**' निंद्रा के वशीभूत नहीं होते थे। '**जेम्हां सूता रैण बिहावै, तो बरतै बिम्बा बारूं**' जाम्भाणी साहित्य इन बातों के लिये बहुतायत से प्रमाण प्रस्तुत करता है। जाम्भोजी केवल्य ज्ञानी ब्रह्मज्ञानी, सिद्ध, शून्य मण्डल के राजा, अल्लाह, अलेख, अडाल, अयोनि शिम्भु थे। वे कैसे किसी माँ के गर्भ से आ सकते हैं।

सभी ज्ञानी संतों ने कहा है कि 'लोहट घर अवतारा', पहली आरती लोहट घर आये। 'प्रगटे जब रूप निरंजन, बाबो जंबू दीपे प्रगटयो', इत्यादि सभी ने जाम्भोजी का लोहट घर अवतार होने की बात कही है। हांसा माता के गर्भ से जन्म लेने की बात किसी ने भी नहीं कही है। ना मेरे माय, न बाप, न बहण, न भाई, जिनका जन्म ही नहीं है तो फिर मृत्यु कैसे हो सकती है? लालासर की साथरी पर पहुंचकर के प्रयाण की बात कही है। मृत्यु की बात कहीं नहीं है।

कहा भी है कि 'ओल्हे हुवा अलेख', अर्थात् अब तक तो उनका जाम्भोजी का शरीर दिखाई देता था किन्तु इस समय अलेख हो गये। संवत् 1508 भादव वदि अष्टमी को वह दिव्य शरीर पीपासर में लोहटजी पंवार के घर पर प्रगट हुआ था और संवत् 1593 वदि मिंगसर नवमी तिथि को लालासर के जंगल की साथरी में वह दिव्य शरीर अपना कार्य पूर्ण करके कहीं गया भी नहीं है। इस समय भी 'गुरु आसन सम्भराथले', गुरु का आसन सम्भराथल पर विद्यमान है। वैसे तो कहा है कि 'जहां चीन्हो तहां पायो', और भी अति निकट है। '**हृदय नांव विष्णु को जंपो हाथे करो टवाई, घट घट अघट रहायो। अनंत जुगां मे अमर भणीजूं, ना मेरे पिता न मायो**', गुरु जाम्भोजी का जीवन दर्शन सम्पूर्ण जाम्भाणी साहित्य में दर्शनीय है।

उन्होंने जो भी कुछ दिव्य कार्य किये हैं वे कोई प्रयास द्वारा या लोक दिखावा के लिये नहीं किये वे तो उनके द्वारा अनायास ही हुए हैं। यही उनकी कृष्ण चरित्र की महिमा प्रगट हुई है। इस समय भी श्रद्धालुजनों की भक्ति भावना दर्शनीय एवं आचरणीय भी है। इस समय भी श्रीदेवजी के चमत्कारों से चमत्कृत होकर जनमानस दौड़े चले आ रहे हैं और अपनी मनोकामना पूर्ण कर रहे हैं। धन्य है यह मरूभूमि, धन्य हैं यहां के लोग जो अपने जीवन में युक्ति और मुक्ति का मार्ग अपना रहे हैं।

-कृष्णानन्द आचार्य
अध्यक्ष, जाम्भाणी साहित्य अकादमी
बिश्नोई धर्मशाला, ऋषिकेश, उत्तराखण्ड
मो.: 9897390866

gfjr vkLFkk dh fojklr x# tHk'oj th dh i;koj.kh; ufrdrk vkj verknoh dk cfynku

वर्तमान समय में वैश्विक भूमंडल पर हरित आस्था और पर्यावरणीय विक्षोभ के अंत:संबंधों ने दुनिया को इस सीमा तक प्रभावित किया है, जिसके कारण सर्वत्र राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन, संगोष्ठियों में विचार मंथन किया जाता रहा है। अंधाधुंध वन विनाश व रासायनिक उर्वरकों के आधिक्य व कृषि प्रौद्योगिकी के साथ मशीनी प्रदूषकों के मानक स्तर में वृद्धि से कई ज्वलंत एवं जटिल समस्याओं को जन्म दिया है। हम जो आस्था का जीवन जीते हैं वही हमारी विरासत है, चाहे वह ईश्वर के प्रति हो या प्रकृति पर्यावरण के प्रति। पूर्वजों ने हमें जो प्रेरणास्पद एवं गौरवशाली सभ्यता, संस्कृति और परंपराएं सौंपी हैं, हम उन्हें अगली पीढ़ी को ओर श्रेष्ठ करके सौंपें। यदि हमें ईश्वर को पाना है तो हमें ईश्वर में आस्था और विश्वास करना सीखना होगा क्योंकि संस्कार और विश्वास की विरासत धन से कहीं ज्यादा मूल्यवान होती है और हम धन या भौतिक संसाधन खो सकते हैं, अपनी शिक्षा, संस्कार, संस्कृति और विश्वास को नहीं। यही हमारी आस्था है, यही हमारी विरासत है। वनस्पतियां हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। यह गुरुत्व शक्ति से सम्पन्न है, अत: इनका संरक्षण अति आवश्यक है। प्रकृति को विपरीत व्यवहार असहनीय है। ऋग्वेद के मरुत सूक्त में वृक्षों को काटने से मना किया गया है और नवीन वृक्षारोपण की प्रेरणा दी गई है।

ऋग्वेद में कहा गया है द्यूलोक, पृथ्वीलोक, वनस्पतियां तथा जल एक बार ही उत्पन्न होते हैं, पुन: पुन: नहीं। आज अंधाधुंध शहरीकरण उद्योगीकीकरण ने पर्यावरण को नुक्सान पहुंचाया है। भारतीय संस्कृति में पौधों का औषधीय व आध्यात्मिक महत्व है, जैसे खेजड़ी, तुलसी, पीपल, बरगद आदि आदि। वेदों में वर्णित पर्यावरण दर्शन केवल मानव उपयोग के लिए एक संसाधन से कहीं अधिक है। यह व्यापक दृष्टिकोण सभी जीवों की परस्पर निर्भरता और मानव एवं प्राकृतिक जगत के बीच मूलभूत अत: संबंध पर बल देता है। वेदों में पृथ्वी, जल, वायु और आकाश को जीवन की उत्पत्ति मानी गई है। इसीलिए शुद्ध पर्यावरण और वनस्पतियों का सावधानीपूर्वक संरक्षण करने और सम्मान करने पर जोर दिया गया। प्रकृति सदा से ही अजेय रही है उसको जीतना मनुष्य जीवन के लिए असंभव है, छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने कामायनी के 'चिंता' सर्ग में यही तो दर्शाया है–

'प्रकृति रही दुर्जेय पराजित हम सब थे, भूले मद में।
भोले थे हां तिरते केवल सब विलासिता के नद में,
वे सब डूबे, डूबा उनका वैभव, बन गया पारावार।
उमड़ रहा था देव सुखों पर, दुख जलधि का नाद॥'

अर्थात् देव संस्कृति के प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के सपने भी कभी पूर्ण नहीं हुए।

जीव और प्रकृति में गहरे तक अंत:संबंध है। प्रकृति हमें सब कुछ देती है, हमें लेना भी चाहिए। लेकिन पशुओं की तरह उजाड़ना नहीं चाहिए। इंसान निर्माण कर सकता है, प्रकृति को संवार भी सकता है। उसे चाहिए कि वह नवनिर्माण में सहयोग करें। प्रत्येक आदमी अपने जीवन काल में पेड़ लगाता रहे तो धरती हरित हो सकती है। विश्व में शायद ही कोई देश होगा जहां हरे वृक्षों के प्रति आस्था नहीं होगी। भारत भूमि इस पक्ष से काफी उर्वरा रही है, यहां पशु पक्षियों से लेकर वनस्पतियों में दृढ़ आस्था, भावनात्मक रिश्ता सदियों से रहा है, हम वर्षों से प्रकृति में चेतना देखते हैं। ईश्वरीय तत्वों का आभास करते हैं, तभी तो हमारे लिए यह पूजनीय है। गुरु जांभोजी ने तो यहां तक कहा है कि– **'हरी कंकेरी मंडप मेडी, तहां हमारा वासा'**

अर्थात् खेजड़ी में ही मेरा निवास है। बिश्नोई संप्रदाय खेजड़ी में ईश्वर का निवास मानता है। यह उसकी गहरी आस्था और श्रद्धा है। आस्था पर चोट सबसे खतरनाक होती है आस्थावान या तो मर मिट सकता है या दूसरों के अस्तित्व को ही मिटा देता है। बिश्नोई मन, वचन, कर्म से अहिंसा के पुजारी है दूसरों को हानि कैसे पहुंचा सकता है। अपने आप को समर्पित कर देना प्रतिरोध का दूसरा रूप है, इसलिए अहिंसक बनकर आस्था को समर्पित होकर, अपना बलिदान देना उचित समझता है। आस्था यह थी कि हमारे ईश्वर ही नहीं बचेंगे तो हम शेष रहकर क्या करेंगे।

जंभेश्वर जी 'वसुदेव कुटुंबकम' के सिद्धांत में विश्वास करते थे अर्थात् पूरा विश्व ही एक परिवार है और हम सब उसी परिवार का हिस्सा है। इस विचारधारा के

अनुसार प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी राष्ट्र, जाति, धर्म या वर्ग से हो एक व्यापक परिवार का हिस्सा है। यह विचार भारतीय आध्यात्मिकता और सांस्कृतिक चिंतन में गहराई से समाया हुआ है। जो करुणा, संयम, सहिष्णुता और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व पर बल देता है। आज के वैश्विकृत विश्व में इस सिद्धांत की महत्वपूर्ण प्रासंगिकता है क्योंकि सभी देश तेजी से समान चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। जिसके लिए सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता होती है। अखिल भारतीय बिश्नोई महासभा द्वारा 4-5 फरवरी, 2023 को यूएई दुबई में दो दिवसीय अंतरराष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन किया गया था। वहां गुरु जंभेश्वर की वाणी को विश्व पटल पर रखा गया। पर्यावरण चेतना और '**जीवां जुगति और मुवा मुक्ति**' की संदेश वाहिनी गुरु जांभोजी की सबदवाणी व संत कवियों की वाणी जहां भी जाती है, पर्यावरण का अलख जगाती है। यदि पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए अंतर्मन से प्रयास करना है तो इस पर्यावरणीय बोध को भी जानना होगा। पर्यावरण के लिए अमृता देवी और बिश्नोई समाज के 363 वीर वीरांगनाओं के सामूहिक शहादत सुनकर विदेशी धरती के लोग आश्चर्यचकित रह गए। इस तरह की भारत भूमि और गौरवान्वित कर देने वाले संस्थान को देखने के लिए लालायित होने लगे।

हमारा सनातन हिंदू धर्म मनुष्य को प्रकृति पर्यावरण का अभिन्न अंग मानता है। प्रकृति के दो रूप हैं एक प्रदाता एवं दूसरा शत्रु या विनाश का प्रकृति का जीवन से हमेशा सह-संबंध रहा है। हम मूलभूत रूप से प्रकृति पर निर्भर हैं, क्योंकि जीव का निर्माण पांच भौतिक तत्वों से निर्मित है। आवश्यकता से अधिक विक्षोभ विनाश को न्योता देता है। शास्त्रों में कहा है- 'अति सर्वत्र वर्जयते' जिस तत्व की प्रकृति या शरीर में आधिक्य होगा, वहीं विनाश है। अत: संतुलन अति आवश्यक है, यही नैतिकता है। इसीलिए प्रकृति और पर्यावरण के संबंध को हमारे व्यवहार और नीतियों की आचार संहिता द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए जो बुनियादी सिद्धांतों और संबंधित मुद्दों पर व्यावहारिक विचार-विमर्श पर आधारित हो। वहीं पर्यावरण प्रकृति मानव निर्मित संरचनाओं और सामाजिक कारकों का एक व्यापक शब्द है जो प्रत्येक जीव को घेरे रहता है और उसे प्रभावित भी करता है। ये सभी घटक जैसे पौधे, पशु ,पक्षी, जानवर और सूक्ष्मजीव शामिल हैं, यही प्रकृति पर्यावरण है। बायोफीलिया परिकल्पना बताती है कि जब हम प्रकृति के साथ संबंध को मजबूत करते हैं, स्थाई करते हैं तो हमारा कल्याण बढ़ता है।

प्रकृति पर्यावरण के पांच घटक है। जल, वायु, पृथ्वी, ध्वनि-आकाश और वनस्पति। सभी का सामंजस्य ही जीवन का प्रमाण है आदिकाल से ही वनस्पति का धार्मिक, आध्यात्मिक और सामाजिक महत्व रहा है। खेजड़ी, तुलसी, पीपल, वट आदि अनेक पौधों में देवताओं का वास माना जाता है, इसीलिए हमने उनकी सुरक्षा, पोषण एवं संवर्धन का प्रयास किया है। आस्था अनुसार लोग अपनी मन्नत के लिए रोली-मोली, चंदन, धूप, दीप प्रदीक्षणा, पूजन, जल, दूध आदि अर्पण कर श्रद्धा अनुसार समर्पण का भाव प्रकट करते हैं।

पर्यावरणीय नैतिकता का यही आस्तिक स्वरूप मानव जीवन का आधार है। प्रकृति का दिव्य स्वरूप जिसमें सनातन संस्कृति के लोग आत्म समर्पण के भाव में आकंठ ध्यान मग्न है। वैसे पर्यावरणीय नैतिकता का अर्थ है- ऐसी शिक्षा, ज्ञान परंपरा एवं जीवन मूल्य जो मनुष्य के जीवन के अंत:करण और बाह्य स्वरूप को प्रभावित कर जीवन जीने योग्य बना दें। प्रकृति पर्यावरण की नैतिकता का मूल है- करुणा, संयम, धैर्य, प्रेम, आस्था व विश्वास का तत्व देखना जिसको कई रूपों में देखा जा सकता है- सामाजिक पर्यावरण एवं नैतिकता आर्थिक पर्यावरण एवं नैतिकता आध्यात्मिक पर्यावरण एवं नैतिकता व वानस्पतिक पर्यावरण एवं नैतिकता।

सामाजिक पर्यावरण एवं नैतिकता- व्यक्ति से परिवार एवं परिवार से समाज बनता है। जिसकी एक निश्चित सीमा एवं प्रतिबद्धता होती है। नैतिक आचरण से समाज में सही और गलत में भेद करने में सहायता मिलती है। हम एक दूसरे के साथ सहमति, ईमानदारी, सत्य, सदाचार, आचार व्यवहार एवं मित्रता से रहें तथा एक दूसरे को सहयोग करें। यदि बिना भेदभाव के समानता, ईमानदारी से व्यवहार का संपादन होता रहे तो हमारा सामाजिक पर्यावरणीय पक्ष मजबूत, सशक्त व श्रेष्ठ कहलाएगा। यदि इसमें झूठ, कपट व व्यभिचार जैसे दुर्गुणों का समावेश होगा तो समाज में बिखराव और भटकाव अवश्यंभावी है। समाज में घृणा, क्रोध, हिंसा को जगह मिलेगी जिसे कभी अच्छाई की श्रेणी में नहीं देखा जाएगा। जम्भेश्वर जी की वाणी और 29 नियमों से सभी धर्म एवं संप्रदाय के लोगों में समानता, धैर्य, अहिंसा, सत्य एवं नैतिकता की शिक्षा से तात्कालिक सामाजिक वातावरण में एक सकारात्मक

ऊर्जा का संचार हुआ। लोग संपन्न थे, आपस में भाईचारे से रहते थे और सामाजिक ढांचा इतना मजबूत था कि सभी लोग मिलजुल कर रहना ज्यादा पसंद करते थे।

आर्थिक पर्यावरण एवं नैतिकता- अर्थ तंत्र जीविकोपार्जन का एक प्रधान साधन है। यह भी सच है कि आर्थिक स्वार्थ ही नैतिकता के ह्रास का कारण है। कृषि, पशुपालन, व्यवसाय, लघु उद्योग, कल कारखानों से अर्थ उत्पादन कर परिवार का पालन-पोषण एक सामान्य प्रक्रिया है। आज कृषि प्रौदयोगिकी मशीनीकरण का बोलबाला है। आर्थिक विकास में मानव श्रम अपेक्षित है। यदि मांग के अनुसार उत्पादन की श्रृंखला बनी रहे तो इस उत्पादन से लोगों की सम्पन्नता खुशहाली और प्रसन्नता निर्भर करती है। इस विकास क्रम की श्रृंखला में सत्यवादिता, ईमानदारी और सदव्यवहार जैसे गुणों की आवश्यकता होती है। तत्कालीन समाज में इन सभी गुणों को देखा जा सकता है जिससे आर्थिक पर्यावरण का वातावरण अच्छा और श्रेष्ठ था।

आध्यात्मिक पर्यावरण एवं नैतिकता- भौतिक जगत सृष्टि का मूर्त रूप है, जो माया से प्रच्छन्न है। जीव और परमात्मा के बीच मायावी आवरण है। माया के अस्तित्व के तिरोहित होते ही जीव ईश-तत्व की पहचान करता है। लेकिन हमारा शरीर भी माया से आवृत है। इसके लिए अहं के भाव से शून्य होना पड़ता है जब तक 'मैं' की सत्ता है तब तक वह अपने शरीर को ही सब कुछ मानता है, आत्मा को नहीं। जंभेश्वर जी की वाणी में कई जगह उल्लेख हैं। **'काया भीतर माया आछै, माया भीतर दया आछै'**। इसी प्रकार अहंकारी व्यक्ति कभी भी लोक-परलोक में उन्नति नहीं कर सकता यकिंत जीवन का यह दुर्भाग्य है कि सृष्टि में किसी न किसी रूप में अहंकार करता ही आया है। जितना अभियान दुर्योधन ने किया उतना और किसी ने नहीं दुर्योधन के अहंकार ने महाभारत करवा दिया था- **'तउवा माण दुर्योधन माण्या, अवर भी माणत माणो'**।

भारत सनातन संस्कृति की उर्वरा भूमि है। जहां ज्ञान, भक्ति, शांति और सदभाव का साम्राज्य दिखता और महसूस होता है। जिसे सारा विश्व बड़ी आश्चर्य भरी नजरों से देखता है। विदेशी पर्यटक हमारे देश की सभ्यता, संस्कृति, शांतिप्रियता और पारिवारिक सामंजय को देखकर अभिभूत हैं। वास्तव में इस देश में समभाव व समरसता मेलजोल और संयुक्त पारिवारिक प्रथा किसी भी अन्य राष्ट्र से पृथक् करती है। वास्तव में इस देश की समृद्धि का मूल कारण अध्यात्म की रसधारा रही है, जो प्रातः कालीन इस वंदना से शुरू होकर संध्या आरती के साथ सम्पन्न होती है। हमारी संस्कृति 'वसुदेव कुटुंबकम' 'अहिंसा परमो धर्मः' की रही है। जांभाणी में आध्यात्मिक चेतना समरसता शांति सद्भाव और सच्चिदानंद की प्राप्ति के लिए जनमानस में प्रेरणादाई संदेश दिया है। आध्यात्मिक ज्ञान के अभाव में आज की युवा पीढ़ी में भटकाव और बिखराव आया है। दैहिक सुखों के पीछे बौद्धिक स्तर गिरता जा रहा है, मानसिक अशांति में वृद्धि हुई है, मनुष्य जीवन सेवा के लिए है भोग एवं संग्रह के लिए नहीं है। जांभोजी ने तो इस जीवन को क्षणभंगुर मानते हुए ईश्वर की आराधना पर जोर दिया है। कहा है- **'विष्णु विष्णु भण रे प्राणी इस जीवन के हावै। क्षण-क्षण आव घटती जावे, मरण दिनों दिन नैडों आवै॥'**

आज के भौतिकवादी संसार में आत्मा के उत्थान की ओर कोई ध्यान नहीं देता। इसीलिए सारा विश्व मानसिक रोगों से त्रस्त-ग्रस्त है। तुलसी ने तो यहां तक कहा है कि **'बड़े भाग मानुष तन पावा। सुर दुर्लभ सब ग्रंथनि गावा॥'** अर्थात् मनुष्य शरीर की प्राप्ति देवताओं को भी दुर्लभ है, ये सब ग्रंथों मे कहा गया है। इसलिए हृदय की मलीनता, हिंसक वृत्ति, भोग लिप्सा, काम-क्रोध, लोभ -अहंकार को नष्ट करने की सख्त आवश्यकता है, क्योंकि इसी से मानसिक और आध्यात्मिक शांति संभव है, अन्यथा मनष्य जीवन व्यर्थ हैं। संसार की नश्वरता और क्षण भंगुरता का वर्णन द्रष्ट्व्य है- **'इस गढ़ कोई थिर न रहिबा, निश्चै चाला गया गुरु पीरु।'** इसलिए संतोष वृत्ति अपनाकर अहं त्याग देने से ईश्वर का सामीप्य सुलभ है। सबदवाणी में एक जगह उद्धृत है- **'सदा संतोषी सत उपकरणां, म्हे तजिया मान अभिमनु॥'**

जंभेश्वर जी की वाणी में नैतिकता का पक्ष मानवतावाद पर आधारित है जो सामाजिक समानता, वैराग्य, आंतरिक सचिता, प्रेम और सद्व्यवहार पर केंद्रित है। वाणी में सात्विक कर्म व सकारात्मक चिंतन के सिद्धांतों के मानकों पर आधारित है, जो एक सार्वभौमिक मानवतावाद का आदर्श स्थापित करते हैं। मनुष्य जीवन दुर्लभ है उसे क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए? संगति व्यक्ति को कैसे प्रभावित करती है?

'लोहा नीर किसी विध तिरबा, उत्तम संग स्नेही॥'
'उत्तम संग सूं संगू, उत्तम रंग सूं रंगूं, उत्तम लंग सूं लंगू॥'

यही उनका व्यावहारिक दृष्टिकोण था जो सरल सुबोध और आम लोगों की भाषा में कहा गया था जिसने सबको प्रभावित ही नहीं किया आमजन ने अपनाया भी था।

जंभेश्वर जी के सिद्धांतों में सामाजिक समानता वैराग्य, आंतरिक सचिता, प्रेम, सद्व्यवहार है। 29 नियमों की आचार संहिता ही बिश्नोई पंथ का संविधान हैं। उन्होंने समाज से मूल्य ग्रहण कर उन्हें संवर्धित परिष्कृत कर समाज के लिए उपयोगी सार्थक एवं स्वस्थ मूल्य का निर्धारण किया। वे सारग्राही महात्मा थे, जिन्होंने अपने समय के प्रचलित सभी मत-मतांतरों के सार को ग्रहण किया। उन्हें अपने तर्क और अनुभव की कसौटी पर कसा। जो विश्वास, मान्यताएं मानवता के लिए नैतिकता की दृष्टि से एवं भक्ति की राह में अनुकूल थी, उन्हीं को अपनाया और समर्थन किया सामाजिक रुढ़ियों, कुरीतियों, पाखंडों का तीव्र विरोध किया। वह अद्वितीय है। उनकी वाणी का प्रथम शब्द ही पाखंड पर प्रहार है- **'गुरु चिन्ह गुरु चिन्हों पुरोहित, गुरमुख धर्म बखानी।'** इन्होंने ईश्वर को कण-कण में और घट-घट में बताया और कहा कि **'भवन भवन में एका ज्योति।'**

अमृता देवी का बलिदानः पर्यावरण की चिरंतन व शाश्वत प्रासंगिकता- राजस्थान की धरती शौर्य और बलिदान की गाथाओं से भरी पड़ी है। मातृभूमि के लिए या अपने राष्ट्र के लिए अनेक सूरवीर वीरगति को प्राप्त हुए हैं। बिश्नोई समाज में अमृता देवी के नेतृत्व में सन् 1730 में जीव और पर्यावरण की रक्षा के लिए 363 वीरों ने आत्मोत्सर्ग किया है। ऐसा उदाहरण विश्व में कहीं नहीं मिलता। बिश्नोई जाति के इतिहास में इतना बड़ा बलिदान कोई सामान्य घटना नहीं है। यह तत्कालीन शासक का विवेकहीन, संवेदना शून्य आदेश था। जिसने मानवता को शर्मसार कर दिया और यह मानवता के माथे पर कलंक का टीका था। इस घृणित कार्य को सुनकर आज भी आंखें नम हो जाती है। यह अव्यावहारिक निंदनीय कार्य था। आज भी कानून से और अपराधियों से लड़ते हुए हिरनों का अस्तित्व बचाने के लिए अनेक बिश्नोइयों ने शहादत दी है। वृक्षों को बचाने के लिए विश्व में चिपको आंदोलन की शुरूआत वीरांगना अमृता देवी से ही मानी जाती है। रोंगटे खड़े कर देने वाली घटना के मूल में एक ही आस्था और विश्वास था। अपने ईष्ट का यह उपदेश कि ईश तत्व सर्वव्यापक है, सार्वभौमिक है, घट-घट में व्याप्त है। यहां तक की वनस्पति में भी जांभोजी ने यही कहा था कि **'हरि कंकेडी मंडप मेडी, तहां हमारा वासा'** इसी आस्था ने अपनी विरासत को बचाने के लिए अपने आप को शहीद कर दिया। 19वां नियम देखिए- **'जीव दया पालणी, रुंख लीला नहीं घावै।'** आज भी बिश्नोई वन एवं वन्य जीवों को बचाने के लिए जान हथेली पर रखकर हमेशा आगे रहते हैं। बिश्नोई संप्रदाय खेजड़ी ही नहीं हिरण सुरक्षा के लिए भी अपनी जान दे देते हैं। उन्होंने फिर कहा है- **'बरजत मारे जीव, तहां मर जाइए'** अर्थात् जहां मना करने पर भी जीवों को मारा जाता हो, वहां उनकी सुरक्षा में स्वयं को मर जाना चाहिए। यह जीवंत पर्यावरणीय बोध और दिव्य प्रकृति सृष्टि सृजन कहीं ओर देखने को नहीं मिलता। इसका ताजा उदाहरण ग्लोबल वार्मिंग से पृथ्वी को बचाने के लिए राजस्थान में सोलर कंपनियों द्वारा खेजड़ी कटाव के विरोध में लगातार कई दिनों से धरना प्रदर्शन रैली जारी किए हुए हैं, यह उनका वन्य प्रेम ही तो है। खेजड़ी कोई साधारण पेड़ नहीं है। वैज्ञानिक दृष्टि से यह अति महत्वपूर्ण है। खेजड़ी जैसे वृक्ष रेगिस्तान में जून के महीने में 50 डिग्री पर भी हरे रहकर छाया और फल देते हैं।

प्राणवायु ऑक्सीजन विसर्जित करते हैं। यह धरती के नैसर्गिक श्रृंगार है। जंगल की शोभा व पक्षियों के घरबार हैं। औषधि के भंडार है। यह पाताल की नमी को ऊपर खींचते हैं। इसकी सांगरी, (फल) में कैल्शियम, फाइबर, प्रोटीन, विटामिन की मात्रा अधिक होती है। इसके पेड़ पर विरुद्ध गुणों वाले जीव वैर -भाव भुलाकर रहते हैं, जैसे- तोता-मैना, चील, उल्लू, गिलहरी, गिरगिट आदि। करोना काल में ऑक्सीजन संकट इंसानों ने ही वृक्षों का विनाश कर उत्पन्न किया था। यह सब जानते हैं। 12 सितंबर भादवा सूदी दशमी को हरियाणा के तत्कालीन मुख्यमंत्री चौ. भजनलाल जी द्वारा खेजड़ली शहीद स्मारक और मेले का शुभारंभ किया था। इससे अमृता देवी मेला (खेजड़ली मेला) भी कहते हैं।

सापेक्ष एवं सम्यक मूल्यांकन और शैक्षणिक चिंतन- आज का युग विज्ञान का युग है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का युग है, जो मनुष्य को मशीन की तरह संवेदना शून्यता की ओर ले जा रहा है। यही कारण है कि संयुक्त पारिवारिक प्रथा का ढांचा छिन्न-भिन्न होकर एकल परिवारों में बदल रहा है। उच्च शिक्षा के बाहुल्य ने बुजुर्ग दंपत्तियों को एकाकी खड़ा कर दिया है। हमारी संस्कृति, परंपराओं, आस्थाओं में नवीन मूल्य स्थापित होते जा रहे हैं। 29

नियमों की कुछ कड़ियां अपना अस्तित्व बचाने में संघर्षरत है। आधुनिकता के नाम से नए मानदंड, नए आदर्श और नए जीवन मूल्य स्थापित हो रहे हैं। कहीं यह हमारी आस्था पर चोट तो नहीं है, इसको हमें संभालना होगा। मौलिक संस्कारों की ओर लौटना होगा। आधुनिकता या नवीनता बुरी नहीं है बल्कि इसमें से हमें अच्छाइयों और प्रगति को अपनाना है। हमारे संस्कार जो हमारी पहचान है उनको भी संभालना है, ये कहीं पीछे नहीं छूट जाए। नई पीढ़ी को इस शिक्षा विज्ञान का अभ्यास जरूर होना चाहिए। हमारे गौरवशाली आस्था की विरासत को नई पीढ़ी को सौंपते समय विवेक एवं ज्ञान से काम लेना होगा। जिसमें नई ऊर्जा उत्साह और प्रेरणा हो। भविष्य की चुनौतियों से संभल कर सामना करना है।

समाज की जातीय शुचिता, (वैवाहिक प्रबंधन) नशावृत्ति, मृत्यु भोज, बाल विवाह, मूर्ति पूजा, वेशभूषा, आडंबर आदि अनेक विसंगतियां आधुनिकता की आड़ में या तो विकृत रूप लेते जा रहे हैं या फिर अपनी आस्था की पहचान को आंखें दिखा रही हैं। इन सब का एक ही समाधान है, वह है- सबदवाणी और 29 नियमों का श्रद्धापूर्वक पालन। जंभेश्वर जी की वाणी का व्यावहारिक और सैद्धांतिक पक्ष और पर्यावरणीय चेतना को हमारे माध्यमिक और विश्वविद्यालय की शिक्षा के पाठ्क्रम में सम्मिलित कर अध्ययन अध्यापन करवाया जाना चाहिए। ताकि देश के सभी शिक्षार्थियों, शोधार्थियों को इसका लाभ मिल सके। इसी क्रम में जांभाणी संतों के साहित्य को राजस्थानी और हिंदी साहित्य के इतिहास में विस्तृत जगह दी जानी चाहिए ताकि पाठकों को और शिक्षार्थियों को जानने का समझने का अवसर मिले। जंभेश्वर जी का साहित्य उच्च मूल्यपरक सिद्धांत और दार्शनिक विवेचना वाला साहित्य है। जिसको साहित्यिक विषयों जैसे राजस्थानी, हिंदी, संस्कृत, अंग्रेजी आदि के साथ-साथ समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र, नीति शास्त्र और भी अन्य विषयों में पढ़ाने के लिए प्रयास किया जाना चाहिए। इसी प्रकार यदि पर्यावरण को बचाना है तो जंभेश्वर जी की लोकप्रिय शिक्षाओं और संस्कारों को विश्व भर में फैलाना होगा ताकि पर्यावरणीय संकट से निजात पाई जा सके।

-सुभाष चंद्र बिश्नोई
से.नि. प्रधानाचार्य
सी-331-करणी नगर लालगढ़, बीकानेर (राज.)
मो.: 944264652, 968068686

कविता

एक सपना

खुली आँखों से देखा एक ख्वाब है,
अंधेरों को चीरता उम्मीदों का आफ़ताब है।
कैलेंडर के गए पन्नों संग मायूसी
पीछे रह जाएंगी,
बदलती तारीखों संग उम्मीदें नई खुशिया लाएंगी।
नया साल जब आएगा, नई उमंगें संग लाएगा।
क्यों गलत सोचें कुछ गलत
होगा सकल मनोरथ पूर्ण कर जाएगा।
नई खुशियां होंगी, नई उम्मीदें,
नई रोशनी ले आएगा।
युद्ध खत्म होंगे, सब दूर भ्रम होंगे,
प्रेम का संदेश लिए चमन को महकाएगा।
नया साल जब आएगा, नई खुशियां लाएगा।
भूकम्प और बाढ़ का प्रकोप ना होगा,
महामारी और आपदा का कोप ना होगा।
खुशहाली उगेगी, सूरज संग, प्रकाश बन किरणों को बिखराएगा।
नया साल जब आएगा
नई खुशियां लाएगा।
राग द्वेष मिटेगा, मन होंगे साफ,
तब वैर भाव खत्म हो जाएगा।
मानवता फिर जाग जायेगी,
शांति का परचम लहराएगा।
ऐसे नए साल की उम्मीद करें हम,
अपने दिल से हर डर को
दूर करें हम पाएं हम।
क्या कभी ऐसा साल आएगा,
जो उम्मीदें और खुशियां लाएगा।
ऐसा नया साल आएगा।
नए साल की बहुत-बहुत बधाई।

रेणु शर्मा
सेवानिवृत्त अध्यापिका
म.नं. 173, पी.एल.ए., हिसार

सबदवाणी और मनुस्मृतिः मानव मन की आचार-संहिता

मनुस्मृति स्मृतियों में प्राचीनतम तथा सर्वाधिक मान्य है। इसमें समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र एवं अर्थशास्त्र सभी का समावेश है। अतः सामाजिक व्यवस्था का यह आधारभूत ग्रन्थ है। परम्परा के अनुसार इसके रचयिता मनु थे, जो आदि व्यवस्थापक माने जाते हैं। परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से यह कहना कठिन है कि यह एक काल में तथा एक ही व्यक्ति के द्वारा प्रणीत हुई। इतना कहा जा सकता है कि मानव परम्परा में धर्मशास्त्र का प्रणयन हुआ। ऋग्वेद के अनुसार वे मानव जाति के पिता माने जाते हैं। एक ऋषि प्रार्थना करता है कि वह मनु के मार्ग से च्युत न हो। वैदिक परम्परा के अनुसार मनु प्रथम यज्ञकर्ता थे। तैतरीय संहिता और ब्राह्मण ग्रंथों के अनुसार मनु भेषज है। ताण्डव ब्राह्मण और शतपथ ब्राह्मण में मनु और जलप्लावन की कथा पायी जाती है। निरुक्त में मनु को स्मृतिकार के रूप में स्मरण किया गया है। महाभारत स्वयंभु मनु, प्राचेतसमनु और कहीं केवल मनु का उल्लेख करता है। गौतम, आपस्तम्ब तथा वशिष्ठ धर्मसूत्रों में मनु को प्रणामरूप में उद्धृत किया गया है। महाभारत में ही पुनः कहा गया है कि ब्रह्मा ने एक लक्ष श्लोकों का धर्मशास्त्र बनाया। इसमें प्रतिपादित धर्मों का प्रवर्तन स्वयंभु मनु ने किया। इन पर आधारित शास्त्रों का प्रवर्तन उशना और बृहस्पति ने किया। नारद स्मृति के अनुसार मनु ने एक लक्ष श्लोक, एक सहस्र अस्सी अध्याय और चौबीस प्रकरणों में धर्मशास्त्र की रचना की। मनु ने यह धर्मशास्त्र नारद को और नारद ने मार्कण्डय को, मार्कण्डय ने सुमति भार्गव को प्रदान किया। इन श्लोकों की संख्या भी नारद ने बारह, मार्कण्डेय ने आठ और सुमति भार्गव ने चार सहस्र कर दी, जो वर्तमान में है। नारद स्मृति के अनुसार सुमति भार्गव ने लगभग ढाई हजार अनुष्टुप् छन्दों का रूप देकर बारह अध्यायों में विभक्त कर दिया था, जो आजकल मनुस्मृति के नाम से विदित है। मनु आचार (सदाचार) पर जोर देते हैं-

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च।

(मनु. 1/108)

वैदिक संस्कृति धर्ममूलक है, जिसका नैरन्तर्य बना हुआ है। धर्म शब्द 'धृ' धातु से निष्पन हुआ है। जिसका अर्थ है- धारण करना, बनाये रखना, पुष्ट करना। धर्म का आधार है- आचार। सामान्य धर्म के अन्तर्गत मनु ने दस धर्म नियमों का परिगणन किया है जो सभी व्यक्तियों के लिए सार्वकालिक और सार्वदेशिक है-

धृतिः क्षमादमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

आचार के पालन से धर्म का पालन और विकास होता है। आचारहीन व्यक्तियों से धर्म विमुख हो जाता है। आचारभ्रष्ट व्यक्ति इस लोक और परलोक में विनाश का ही भागी होता है-

आचारः परमोधर्मः सर्वेषामिति निश्चयः।
हीनाचारयरीतात्मा प्रेत चेह न नश्यति॥

बिश्नोई पंथ की आचार संहिता के भी उनतीस नियम है, जिनका उल्लेख गुरु जाम्भोजी की वाणी में बार-बार हुआ है। कहा भी है-

उनतीस धर्म की आखड़ी, हिरदै धरियो जोय।
जाम्भैजी किरपा करी, नाम बिश्नोई होय॥

प्रत्येक युग में आचार-विचार पर बहुत ध्यान दिया गया था, इस बात को मनुस्मृति में इस प्रकार बताया गया है-

तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुच्यते।
द्वापरे यज्ञमेवाहुदनिभेकं कलौ युगे॥

(अ.2, लोक 86)

सतयुग में तप को सर्वश्रेष्ठ धर्म माना है। त्रेतायुग में ज्ञान को श्रेष्ठ धर्म कहा है। द्वापर युग में यज्ञ को ही श्रेष्ठ धर्म कहते हैं। कलयुग में दान को ही एकमात्र श्रेष्ठ धर्म कहा है।

गुरु जाम्भोजी ने अपनी वाणी में कहा है-

जुगां जुगांणी सति करि जाणी, गुरु का सबद ज्यू बोलो झीणी बाणी। (सबद-21)

अर्थात् अनन्त युगों तक वही सत्य है, ऐसा जान। गुरु ज्ञान बहुत ही विरल है, जिससे ब्रह्म की प्राप्ति होती है।

गुरु जाम्भोजी ने इन चारों युगों का ऐसे वर्णन किया-

अै युग च्यारि छतीसां अवर छतीसां, असरा वहै अंधारी।

(सबद-29)

अर्थात् ये चारों युग (सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि) ऐसे ही और छतीस युग पुनः और छतीस युग सब नष्ट हो गये।

गुरु जाम्भोजी ने स्वर्णनदान, वस्त्रदान, घी-तेल दान, हाथी-घोड़ों का दान, कन्यादान को कुछ नहीं माना है। उन्होंने पवित्रता के दान को बड़ा माना है। उनकी वाणी का मूल शब्द देखें-

कंचन दानूं कछु न मानूं।
कापड़ दानूं कछु न मानूं।
चौपड़ दानूं कछु न मानूं।
पाट पटम्बर दानूं, कछु न मानूं।
पंच लाख तुरंगम दानू कछु न मानूं।
हसती दानूं कछु न मानूं।
तिरिया दानूं कछु न मानूं।
मानूं एक सुचील सिनानूं॥104॥

मनु स्मृति में अवस्था की अपेक्षा ज्ञान से वृद्धत्व प्राप्त होना बताया है-

न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः।
यो वै युवाऽप्यधीयानस्तं देवाः स्थविरं विदुः॥

(अ. 2, श्लोक 131(2/158), 105)

कोई इस कारण से वृद्ध नहीं होता है कि जिससे उसका सिर झुक जाता है। केश पक जाते हैं किन्तु जो जवान भी पढ़ा हुआ विद्वान है, उसको विद्वानों ने वृद्ध जाना है और माना है।

गुरु जाम्भोजी ने अपनी वाणी में कहा है-

घणा दिना का वड़ा न कहिबा, वड़ा न लंघिबा पारूं।
उतिम कुळी का उतिम न कहिबा, कारण किरिया सारूं॥

(सबद 26)

अर्थात् बिन गुणों के केवल बड़ी आयु वाला व्यक्ति बड़ा नहीं कहा जा सकता और ऐसा बड़ा व्यक्ति संसार-सागर से पार नहीं हो सकता। इसी प्रकार बिना गुणों के केवल श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न होने से कोई पुरुष श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता, कर्मानुसार ही प्रत्येक कारण बनते हैं।

मनुस्मृति में प्रातः सायं अग्नि होत्र का कहा है-

दूरहाहृत्य समिधः सन्निदध्याद्विहायसि।
सायम्प्रातश्च जुहुयात्ताभिरग्नि मतन्द्रितः॥

(अ. 2, 19 (2, 186), 128)

अर्थात् प्रातः सायं दो काल अग्नि होत्र करें। दो ही रात-दिन की संध्या वेला अन्य नहीं। (पलाश, शमी, पीपल, बड़, गूलर, आम, बिल्व आदि की लकड़ी को समिधा वेदी के प्रमाण छोटी करवा लें)

अग्नि होत्र से लाभ-

आनौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः॥

(मनु. अ. 3, 76, 52)

अर्थात् अग्नि में अच्छी प्रकार डाली हुई घृतादि पदार्थों की आहुति सूर्य को प्राप्त होती है। सूर्य की किरणें वातावरण में मिलकर अपना प्रभाव डालती है। फिर सूर्य से वृष्टि होती है, वृष्टि से अन्न पैदा होता है उससे प्रजाओं का पालन-पोषण होता है।

गुरु जाम्भोजी ने बिश्नोई पंथ की आचार-संहिता में हवन को आवश्यक बताया है। प्रत्येक बिश्नोई के घर में आवश्यक क्रिया के रूप में प्रातः सायं हवन होता है। इसके पश्चात् ही कोई अन्य कार्य शुरू किया जाता है। उनकी वाणी में कहा है-

जां दिन तेरै होम न जाप न तप न किरिया,
जाणि के भागी कपिला गायौ। (सबद-7)

अर्थात् जिस दिन तूने होम, जप, तप तथा अन्य करणीय क्रिया से कर्म नहीं किए, उस दिन तूं ऐसा समझ कि मानो कपिला गाय तेरे घर से भाग गई है। (कपिला गाय रूपी बुद्धि तेरे शरीर से निकल गई है।) पुनः उनकी वाणी का मूल शब्द देखें-

जां दिन तेरे होम न जाप न तप न किरिया।
गुरु न चीन्हूं पंथ न पायो। अहल गई जमवारूं।

अर्थात् जिस दिन तूने होम, जप, तप या सुकृत कुछ भी नहीं किया, वह दिन मानों तेरा व्यर्थ ही गया।

अहिंसा पालन अथवा हिंसा निषेध की मान्यता मनुस्मृति की उन मान्यताओं में से एक है, जिन पर मनुस्मृति रूप प्रासाद टिका हुआ है। यदि इन्हें मनु विहित मान लिया जाये तो मनुस्मृति की आधारभूत व्यवस्था ही खण्डित हो जायेगी। मनु द्वारा विभिन्न स्थलों पर किये गये हिंसा निषेध और अहिंसापालन के आदेशों के परिप्रेक्ष्य में यह सुनिश्चित रूप से कहा जा सकता है कि (अ) सर्वप्रकार की हिंसा का मांस भक्षण मनुविरुद्ध है (आ) पशुयज्ञ मनुविरुद्ध है और (इ) यज्ञ के उद्देश्य से पशु हिंसा करना भी मनुविरुद्ध है। यथा (क) मनु ने गृहस्थियों और वानप्रस्थियों के लिए अनिवार्य रूप से पांच महायज्ञों का विधान किया है। इन यज्ञों के विधान का मुख्य उद्देश्य हिंसा की निवृत्ति ही है-

पंचसूना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युस्करः।
कण्डनी चोदकुम्भश्च बध्यते यास्तु वाहयन्॥
तासां क्रमेण सर्वासा निष्कृत्यर्थं महर्षिभिः।
पंचवलुप्ताः महायज्ञाः प्रत्यह गृहमेधिनाम॥3/68-69॥

जो व्यक्ति दैनिक जीवनचर्या में अज्ञानवश होने वाली छोटी-छोटी हिंसाओं की निवृत्ति के लिए भी प्रायश्चित का विधान करता है, जिसमें पर प्राणी पीड़ा की भावना भी नहीं है और जो आजीविका भी ऐसी अपनाने का विधान करता है, जिसमें किसी प्राणी को पीड़ा न पहुँचे (अ-4, 4) जो पशुओं की सवारी करते हुए उनको चाबुक भी इस प्रकार मारने के लिए कहता है, जिससे वे संतप्त न हों। (4/68) वह व्यक्ति पशुओं की हिंसा और मांस भक्षण का विधान कदापि नहीं कर सकता। यह सर्वथा असम्भव है। आश्चर्य की बात तो यह है कि छोटी-छोटी हिंसाओं के प्रायश्चित के लिए अर्थात् उनके पाप की शुद्धि के लिए ही मनु पांच यज्ञों का विधान कर रहे हैं और फिर लोग यज्ञों में ही हिंसा करने को मनुसम्मत सिद्ध करना चाहते हैं। यदि ऐसा है तो यज्ञों से पाप शुद्धि ही क्या हुई। मनु ने अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में आदेश दिया है- **'निवर्तेत सर्वमांसस्य भक्षणात्'** (अ. 5/49) अर्थात् सब प्रकार के मांस भक्षण से दूर रहें। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक स्थानों पर भी मांस भक्षण का स्पष्ट निषेध है और हिंसक की निन्दा और अहिंसक की प्रशंसा एवं अहिंसा की प्रेरणा है-

(क) वर्जयेत् मधुमांसं च प्राणिनां चेव हिंसनम्। (2/152 (177))

(ख) वर्जयेत् मधुमांसम्। (6/14)

(ग) हिंसारतश्च यो नित्यं नेहासों सुखमेधते। (4/170)

(घ) यो हिंसकानि भूतानि हिनस्ति आत्मसुखेच्छया।
स जीवंश्च मृतश्चेव न क्वचित सुखमेधते॥ (5/45)

(ड़) अहिंस्त्रः दमदानाभ्यां जयेत् स्वर्ण तथाव्रत्। (4/246)

(च) विचरेत् नियतः नित्यं सर्वभूतानि अपीडयन्। (6/52)

(छ) अहिंसया च भूतानां अमृतत्वाय कल्पते॥ (6/60)

(ज) यो बन्धनवधकलेशान्प्राणिनां न चिकीषीते। स सर्वस्य हितप्रेप्सुः सुखमत्यन्तमश्नुते॥ (5/46)

इतना ही नहीं मांस प्राप्ति में किसी भी प्रकार का सहयोग देने वाले व्यक्ति को मनु घातक पापी कहकर सम्बोधित करते हैं। मनु ने आठ प्रकार के व्यक्तियों को पापियों में परिगणित किया है-

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातका॥ (5/51)

अर्थात् मारने की आज्ञा देने वाला, मांस काटने वाला, पशु को मारने वाला, पशु को मारने के लिए माल लेने-बेचने वाला, पकाने वाला, परोसने वाला ओर खाने वाला ये सब हत्यारे और पापी हैं।

मनु के तामसिक, राजसिक और अमेध्यप्रभव अशुद्धस्थानोत्पन्न सभी पदार्थों को अभक्ष्य बताया है। बासी भोजन, लहसुन, प्याज आदि तामसिक, राजसिक के अन्तर्गत आते हैं तथा गन्दे स्थान में उत्पन्न पदार्थ और रक्त चर्बी आदि से युक्त मांस आदि अमेध्यप्रभव है-

(क) लशुनगुंजन चेव पलाण्डु कवकानि च।
अभक्ष्याणि द्विजातीनामेध्यप्रभवाणि च॥
(5/5)

(ख) नाकृत्वा प्राणिनां हिंसा मांसमुत्पद्यते क्वचित्।
न च प्राणिवधः स्वर्ग्यस्तस्मान्मांस क्विर्जयेत्॥
(5/48)

मनु सात्विक गुणों, पदार्थों को ही ग्राह्य और प्रशंसनीय मानते हैं और राजस-तामस को निन्द्य। सात्विक गुणों से ही मोक्ष प्राप्ति सम्भव है। यही मनु के धर्मशास्त्र के प्रवचन का उद्देश्य है-

'ब्राह्मीय क्रियते तनु' (2/3 (28)) तथा तामसिक राजसिक पदार्थों का भक्षण करना मनु के मुख्य प्रतिपाद्य और उद्देश्य के ही विरुद्ध है।

यज्ञों के प्रसंगों में मनु ने कहीं भी मांसयज्ञ का विधान नहीं किया है। वानप्रसंगों में तो स्पष्ट कहा है कि अन्नों से ही यज्ञ करें और वह भी मेध्य= शुभ अन्नों से-

मुन्यन्नेः विवधेः मेध्येः शाकमूलफलेन वा
एतानेव महायज्ञान् निर्वपेत विधिपूर्वकम्॥ (6/5)

मनु ने पुनः कहा है-

समुत्पत्ति च मांसस्य बधबन्धौ च देहिनाम्।
प्रसमीक्ष्य निवर्तेत सर्वमांस्य भक्षणात्॥ (5/49 (11))

मांस की उत्पत्ति जैसी होती है उसको प्राणियों की

हत्या और बन्धन के कष्टों को देखकर सब प्रकार के मांस भक्षण से दूर रहें। फिर कहा है-

वर्षे वर्षेऽश्वमेधेन यो यजेत् शतं समाः।
मांसानि च न खादेद्यस्तयोः पुष्पफलं समम्॥ (5/53)

अर्थात् जो व्यक्ति सौ वर्ष तक प्रतिवर्ष अश्वमेध यज्ञ करता है और जो मांस नहीं खाता उन दोनों के पुण्य का फल बराबर होता है। गुरु जाम्भोजी ने जीव हिंसा के सम्बन्ध में बकर कसाई को कहा है-

सुणि रे काजी सुणि रे मुल्ला, सुणि से बकर कसाई।
किण री थरपी छाली रोसो, किण री गाडर गाई?
सूळ चूभीजै करक दुहेतली, तो जायौ जीव न घाई।
थे तुरकी छुरकी भिसती दावौ, खायबा खाज अखाजूं।
(सबद-8)

अर्थात् हे काजी, हे मुल्ला। हे गाय-हत्या करने वाले कसाई सुनो। तुम किसकी सिरजी हुई बकरी मारते हो? किसकी सिरजी हुई भेड़ और गाय मारते हो? भगवान के बनाये इन निरीह पशुओं को मारकर सुख और बहिश्त की आशा करना व्यर्थ है। तुम्हारी पीड़ा अत्यन्त दुखदाई होती है। उससे बचने के लिए ये पशु भाग कर कहां जाये, ये मनुष्य के आश्रित हैं। अतः हे भाई, इन पैदा हुए जीवों पर प्रहार मत करो। इन्हें मत मारो। हे तुर्कों, एक ओर तो तुम इन पशुओं पर छुरी से वार करके मारकर इन्हें खाते हो, अखाद्य भक्षण करते हो और दूसरी ओर स्वर्ग (बहिश्त) पाने का दावा करते हो, यह कैसे सम्भव है।

वे पुनः कहते हैं-

काहीं लीयो दूधूं दहियूं?
काहीं लीयो घीयौ महियूं?
काहीं लीयो हाडूं मांसूं?
काहीं लीयो रंगतूं रहियूं? (सबद-9)

अर्थात् तुम गाय की हत्या करते हो तो फिर तुम उसका दूध, दही, घी, मट्ठा आदि क्यूं खाते हो? और उसकी ये चीजें खाकर क्यों उसके हाड, मांस और रक्त को पीते हो।

जीव हिंसा करने वाले के लिए ध्यान, ग्यान सब व्यर्थ हैं, गुरु जाम्भोजी की वाणी देखें-

किंह ओजू तुम धोवो आप?
किंह ओजू तुम खंडो पाप?
किंह ओजू तुम धरो धियान?
किंह ओजू चीन्हूं रहमान? (सबद-11)

अर्थात् तुम कैसे नमाज पढ़ने से पूर्व अपनी शारीरिक शुद्धि करते हो? और इससे अपने पापों को कैसे नष्ट कर सकते हो, ऐसा करके तुम कैसे ध्यान करते हो और कैसे रहमान (अल्ला) को पहचानते हो। यदि तुम्हारे समान खोटे और कर्म नीच हैं तो तुम्हारा नमाज पढ़ना व्यर्थ है, मूल देखें-

कारण खोटा करतब हीणां,
थारी खाली पड़ी नमाजूं। (सबद-11)

गुरु जाम्भोजी कहते हैं जीव हिंसा करने वाले ब्रह्म को नहीं पहचान पाते हैं और न ही वे सत्य और न्याय को पहचानते हैं, चमड़ी कटने से जीव को दुख ही होता है। तुम्हारा ईश्वर पर विश्वास नहीं है। अतः निश्चय ही तुम नर्क में जाओगे। मूल देखिये-

अलख न लखियौ खळक पिछाण्यौं
चाम कट्यै क्या हुइयो?
हक हलाल पिछाण्यौ नांही
निहचै विन गाफिल दोरै दीयौं। (सबद-11)

मनु स्मृति में परमात्मा के अनेक नाम बताये हैं-

एतमेके वदन्त्यग्नि मनुमन्ये प्रजापतिम्।
इन्द्रमेके परे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम्॥ (12, 127 (70))

अर्थात् स्व प्रकाश होने से 'अग्नि', विज्ञानस्वरूप होने से मनु सबका पालन करने और परमेश्वर्यवान होने से 'इन्द्र', सबका जीवन सूत्र होने से 'प्राण' और निरन्तर व्यापक होने से परमेश्वर का नाम ब्रह्म है।

गुरु जाम्भोजी ने भी अपनी वाणी में परमेश्वर के अनेक नाम बताए हैं, जैसे '**म्हे जपा न जाया जीवूं, लेखो आप निरंजन लेसी, सतगुरु मिलियो सतपंथ ज पायो, न चीन्हो सुररायौ**' आदि।

मनु ने वनस्पति तथा वृक्ष के विषय में बताया है-

अपुष्पाः फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृतः।
पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्त्भयतः स्मृतः॥ (1.47, 23)

अर्थात् जिन पर बिना फूल आये ही फल लगते हैं वे वनस्पतियां हैं (जैसे बड़-वट, पीपल, गूलर) फूल लगाकर फल लगने वाले दोनों से युक्त होने के कारण वे उदिभज्ज स्थावर जीव वृक्ष कहलाते हैं।

गुरु जाम्भोजी ने वृक्षों में भी प्राण माना है और हरे

वृक्ष को काटना पाप बताया है, उन्होंने कहा- **'हरा वृक्ष नहीं काटना यह सबका मन्तव्य।'**

उन्होंने पुनः कहा- **'सोम अमावस आदितवारी, कांय काटी वनरायो।'**

मनु ने स्त्रियों का बहुत आदर किया है, वे कहते हैं-

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया॥ (3,56,36)

अर्थात् जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है उसमें विद्यायुक्त पुरुष होके देव संज्ञा धरा के आनन्द की क्रीड़ा करते हैं और जिस घर में स्त्रियों का सत्कार नहीं होता है, वहां सब क्रिया निष्फल है। बिश्नोई पंथ की आचार-संहिता में भी खासकर दो नियम स्त्रियों से सम्बन्धित हैं, देखें- **'तीस दिन सूतक पांच ऋतुवन्ती न्यारो'**

अर्थात् स्त्री के बच्चा होने पर उसे गृह कार्यों से अलग रखें एवं तीस दिन तक सूतक मानें। ऋतुवन्ती स्त्री भी पांच दिन तक सभी कार्यों से अलग रहें।

मनु ने लिखा है-

ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडशः स्मृताः।
चतुर्भिरितरैः सार्धमहोभिः सद्विगर्हितैः॥ (3.46(26))

अर्थात् स्त्रियों का स्वाभाविक ऋतुकाल सोलह रात्रि का है अर्थात् रजोदर्शन दिन से ले के, सोलहवें दिन तक ऋतु समय है। उनमें से प्रथम की चार रात्रि अर्थात् जिस दिन रजस्वला हो उस दिन से ले के चार दिन निन्दित हैं।

गुरु जाम्भोजी ने ऋतु धर्म पालन न करने वाली स्त्री को विषळीपति नारी कहा है, देखें-

असध पुरष विषळीपति नारी,
विण परचै पार गिराय न जाई।

अर्थात् दुष्ट-पुरुष और व्याभिचारिणी स्त्री का बिना गुरु-ज्ञान उद्धार नहीं हो सकता। उनका यह कथन तीस दिन सूतक एवं पाँच दिन रजस्वला का पालन न करने वाले स्त्री-पुरुषों के सम्बन्ध में ही है।

मनुस्मृति में सन्ध्योपासना आदि का पालन करने के विषय में देखें-

उत्थायावश्यक कृत्वाकृत शोचः समाहितः।
पूर्वा सन्ध्या जपस्तिष्ठोस्व काले चाप रा चिरम॥
(अ. 4 श्लोक 93(27))

अर्थात् उठकर दिनचर्या के आवश्यक शौच आदि कार्य सम्पन्न करके स्नान आदि से स्वच्छ पवित्र होकर एकाग्रचित होकर प्रातःकालीन सन्ध्योपासना करने के लिए बैठे और उपयुक्त समय पर सायंकालीन सन्ध्या में ही उपासना करें।

मनु से अग्नि होत्र के सम्बन्ध में भी ऐसा ही विधान बताया है-

अग्नि होत्र च जुहुयादाद्यन्ते द्युनिशोः सदा।
दर्शेन चार्धुमासान्ते पोर्णमासेनं चैव हि॥ (4,25(14))

गृहस्थ दिन रात के आदि अन्त में अर्थात् प्रातः-सायं सन्धि वेलाओं में अग्नि होत्र करें और आधे मास के अन्त में दर्शयज्ञ अर्थात् अमावस्या का यज्ञ करें तथा इसी प्रकार मास पूर्ण होने पर पूर्णमासी के दिन पौर्णमास यज्ञ करें।

गुरु जाम्भोजी ने भी उनतीस धर्म नियमों में द्विकाल सन्ध्या का विधान रखा है। उन्होंने सर्वप्रथम अपनी बुआ तांतू को सन्धया वन्दना मंत्र का जाप बताया। वाणी का मूल शब्द देखें-

विष्णु विष्णु तूं भण रे प्राणी, साधे भगते उधरणो।
दिवलासु दाणू दास्यब दाणू, मदसु दाणो महमाणो।
(संध्या मंत्र)

एक आरती में भी कहा है-

संध्या सुमरण आरती, भजन भरोसै दास।
मनसा वाचा करमणा, सतगुरु चरण निवास॥

गुरु जाम्भोजी ने अमावस्या व्रत करने का बताया है और प्रत्येक दिन हवन करने का कहा है, देखें-

नित ही मावस नित सकरांती।
नित ही नवग्रह बैसे पांति।
नित ही गंग हिलोळै जाय।
सतगुरु चीन्हें सहजे न्हाय।

मनुस्मृति में कहा है- **'संतोष सुख का मूल है'**-

संतोष परमास्थाय सुखार्थी संयतो भवेत्।
संतोष मलूं हि सुखं दुःख मूलं विपर्ययः॥ (4,12(5))

अर्थात् सुख चाहने वाला व्यक्ति अत्यन्त संतोष को धारण करकै अधिक धन की इच्छा न रखने वाला बने। क्योंकि संतोष सुख का आधार है, उससे उल्टा अर्थात् असंतोष दुख का आधार है।

गुरु के लक्षण बताते हुए गुरु जाम्भोजी ने अपनी वाणी में बताया है कि ऐसा गुरु धारण करना चाहिए जो स्वयं संतोषी हो। यदि गुरु ही असंतोषी हुआ तो उसके शिष्य कैसे संतोषी होंगे। मूल शब्द देखें-

गुरु आप संतोषी अवरां पोषी, तंत महारस वाणी।

अर्थात् वह गुरु स्वयं तो संतोषी है ही किन्तु अन्य सबों का पालन करता भी है। वह तत्व स्वरूप परमानन्द है और वाणी से परे है।

उन्होंने पुन: कहा है-

सदा संतोषी सत उपगरणां तजिया मान अभिमानूं।

अर्थात् जो सदा संतोषी है, सत्य को ग्रहण करने वाला है अथवा जो सत्य और परोपकार-वृत्ति को धारण करता है, जिसने मान भावना और अहंकार को त्याग दिया है।

जाम्भोजी की वाणी की ये पंक्तियाँ देखिये-

सत संतोष दोय बीज बीजिलौ, खेती खड़ी अकासी।

अर्थात् सूर्य और चन्द्रमा के संयोग से सत्य और संतोष के बीज बीजने चाहिए, जिससे गगन मण्डल में खेती फलीभूत हो। सत्य और संतोष से चित निर्मल और उदात्त होता है। इनसे मन की वासनाएँ नष्ट होकर तत्व प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। अन्त:करण का निर्मल होना तत्व प्राप्ति के लिए आवश्यक है।

मनु स्मृति में बताया है- झूठ बोलने वाला पापी है।

योऽन्यथा सन्तमात्मानमन्यथा सत्सु भाषते।
स पाप कृत्तमो ले के स्तने आत्मायहारक: ॥

(अ. 4 श्लोक 255 (85))

अर्थात् जो व्यक्ति स्वयं अन्यथा होते हुए सज्जनों में अन्यथा कुछ का कुछ बतलाता है वह लोक में अति पापी माना जाता है। क्योंकि वह अपनी आत्मा का हनन करने वाला है।

बिश्नोई पंथ की आचार संहिता में भी झूठ नहीं बोलने का एक आवश्यक नियम है। यदि व्यक्ति असत्य नहीं बोलेगा तो वह सत्य बोलेगा और सत्य बोलने से उसका कल्याण होगा। गुरु जाम्भोजी ने कहा है-

साच सही म्हे कूड़ न कहिबा।
नैड़ा छां पणि दूरि न रहिबा॥ (सबद-99)

अर्थात् मैं सत्य और सही बातें कहता हूँ मिथ्या भाषण नहीं करता। परमतत्व रूप में मैं प्रत्येक प्राणी में हूँ, उनसे दूर नहीं हूँ। प्रत्येक जीव में परमतत्व का वास है, वह किसी से भी दूर नहीं है।

उनकी वाणी का एक शब्द और देखिये-

जां जां गुरु न चीन्हों,
तइया सींच्या न मूळूं।
को को बोलक थूळूं॥

(सबद-38)

अर्थात् अन्त: उद्धार हेतु गुरु की खोज करनी चाहिए। जिन्होंने परमतत्व (गुरु) को नहीं पहचाना, उन्होंने मूल का सींचन नहीं किया। गुरु को पहचानना मूल बात है। जो लोग यह कहते हैं कि हम उस परमतत्व को जानते हैं वे तो केवल मिथ्या भाषण करने वाले हैं।

मनुस्मृति हिन्दू धर्म की आचार-संहिता का मेरुदण्ड है। हिन्दू धर्म के सभी आचार-विचार, संस्कार, रीति-रिवाज इस ग्रंथ का आधार हैं। इनके आधार पर हिन्दू धर्म इतना फला-फूला है। इनके पालन से ही एक हिन्दू को चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति होती है।

इसी तरह ही बिश्नोई पंथ की आचार संहिता के उनतीस नियम ही इस पंथ का मेरुदण्ड हैं। इनके पालन में शिथिलता आने पर ही आज पंथ में विचलन आने लगा है। इन नियमों का आधार गुरु जाम्भोजी की वाणी है, जिसमें सभी नियम सम्मिलित रूप से बताये गये हैं। इस वाणी के अध्ययन, मनन एवं वाचन से मानव का कल्याण सम्भव है। मनुस्मृति की आचार संहिता के अनेक प्रसंग रामायण में हमें देखने को मिलते हैं। ऐसे ही रामायण के प्रसंग हमें गुरु जाम्भोजी की वाणी में बिखरे पड़े मिले हैं।

संदर्भ:

गुरु जाम्भोजी की सबदवाणी एवं सनातन धर्म ग्रंथ, पृ. 137-150

-डॉ कृष्णलाल बिश्नोई
(एम.ए, जे.डी, एल.एल.बी, पीएच.डी.)
बी-111, बिश्नोई भवन, समतानगर,
कृषि उपज मंडी के सामने,
बीकानेर (राज) 334004
मो.नं. 9460002309
Email: krishanlalbishnoi52@gmail.com

भाग 26 श्री जंभेश्वर जी ने बरसिंह जी के प्रति कहा 22वाँ सबद

एक कथा कहूँ मैं ध्यान लगाकर,
संस्कारों में शक्ति है, यह कहकर।
बरसिंह की व्यथा सुनाता हूँ,
ऋतुवंती का दर्शन बतलाता हूँ॥

बरसिंग बणियाल आया गुरु के पास,
आशा विश्वास वो हृदय में लाया।
विनती की बरसिंग जी बणियाल ने,
सात पीढ़ी उधरै ऐसा विश्वास लाया॥

पुत्र जन्मा उसकी आदत बुरी,
मिट्टी के मृग बना मारे वो बाण।
बरसिंह नारी पूछै ये कौण जीव,
गुरुजी क्षमा करो, है अपराध मेरा,
सत्य कहती हूँ गुरुजी बात मैं॥

एक बार डाकू गऊ थे ले जा रहे,
पीछे छुड़वाने कुछ लोग आ रहे।
उनमें था एक हेंड़ी शिकारी भी,
सब जल पीने वहीं थे आ गए॥

कार्यवश गई मैं मदद लगाने,
ऋतुवंती मैं भी जल पिलाने को।
शिकारी की दृष्टि मुझ पर पड़ी,
यही बहुत है दृष्टि-दोष कमाने को॥

कोई नहीं कर रहा है मेरा प्रत्यक्ष,
सुनकर प्रसन्न गुरुश्री ने था कहा।
इसके पूर्व जन्म के संस्कारों को,
नव संस्कारों में अब करो दक्ष॥

नव संस्कारों से ही होगा सुधार,
सद्मार्ग है जीवन का आधार।
सुनाया गुरुजी ने तब सबद सार,
ये बनेगा सद्मार्ग का है अनुयायी॥

कहे होती राजाओं की कृपा से,
अमृत वर्षा बरसे आसमान।
धरती पर जल सब ओर समान,
पर बंजर भूमि में फल नहीं निदान॥

अभिप्राय गुरु अच्छा है पात्र नहीं,
अपात्र ज्ञान ले सके नहीं।
उत्तम भूमि में उत्तम बीज,
तब अमृत फल का होय सृज॥

दाख से हैं सूखे मेवे मिलें,
ईख नहीं कहीं वहाँ खिलें।
नीम हो तो निबोळी आय,
ढाक हो तो ढकोळी आय॥

कड़वी बेलें कड़वे फल दें,
बिन बोये आक स्वयं उगें।
कुछ पौधे ऐसे जन्म लिये,
जड़ डाली फल सब बिगड़े रहें॥

जैसा बीज तुम डालोगे,
वैसी ही फसल वहाँ पाओगे।
इसमें जल का दोष नहीं,
अभावग्रस्त भटके, भागते सही॥

अंडज योनि में पक्षी जान,
कर्मवश उल्लू चमगादड़ पहचान।
उद्भिज योनि वनस्पति होय,
जेरज योनि में मानव सोय॥

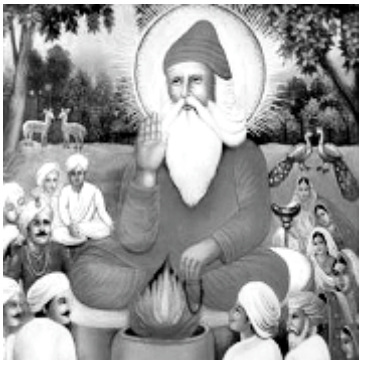

ऐसे जीवों के हृदय मांहि,
ज्ञान न बसे, अज्ञान समाही।
ज्योति नहीं, तम छाया रहे,
कर्मों का फल ही साथ बहे॥

न मोक्ष मिले, न मुक्ति पाए,
न युक्ति हाथ कभी आए।
जैसा बोया, वैसा फल होय,
कर्ता भाव अनुसार सब होय॥

जल में दोष नहीं है ठहरे,
कर्म ही जीव को आगे धकेलें।
हे गुरु जम्भेश्वर नवन प्रणाम,
निवण भाव से कोटि प्रणाम॥

-पृथ्वीसिंह बैनीवाल बिश्नोई
राष्ट्रीय सचिव, जांभाणी साहित्य
अकादमी, बीकानेर;
राष्ट्रीय प्रैस प्रभारी,
अ.भा. जीवरक्षा बिश्नोई सभा, अबोहर
313, सेक्टर 14, हिसार
मो.: 9518139200

बधाई संदेश

पालाराम डूडी सुपुत्र श्री सुरजा राम डूडी, निवासी गांव रावतखेड़ा, जिला हिसार का DHBVN हिसार में UDC के पद से DHBVN सिवानी (भिवानी) में चार्टर्ड एकाउंटेंट के पद पर पदोन्नति हुई है।

दिपांशु भादू सुपुत्र सुरेन्द्र भादू निवासी गांव सीसवाल, तह. आदमपुर, जिला हिसार का प्रवेश राजकीय मेडिकल कॉलेज, अमृतसर में MBBS डिग्री के लिए हुआ है।

अहसास गोदारा सुपुत्र श्री सुरेश कुमार गोदारा निवासी गांव मोहम्मदपुर रोही, जिला फतेहाबाद ने क्रिकेट में School Games Federation of India द्वारा आयोजित 69वें नेशनल स्कूल गेम्स प्रतियोगिता 2025-26 में तृतीय स्थान, दो बार अन्डर 19 में दूसरा स्थान प्राप्त किया है।

सोमवीर बैनीवाल सुपुत्र श्री दलीप राम बैनीवाल सुपुत्र श्री रामस्वरूप बैनीवाल प्रधान, बिश्नोई सभा, रतिया निवासी गांव रत्ताखेड़ा, तह. रतिया, जिला फतेहाबाद का चयन इण्डियन बैंक में कृषि क्षेत्र अधिकारी (AFO) के पद पर हुआ है।

आप सबकी इन उल्लेखनीय उपलब्धियों पर बिश्नोई सभा, हिसार व अमर ज्योति पत्रिका परिवार की ओर से हार्दिक बधाई व उज्ज्वल भविष्य की शुभकामनाएँ।

अनूठी पहल

कर्मदीप सुपुत्र श्री इंद्रजीत (पिनू) सुपुत्र श्री ठाकर दास गोदारा पूर्व सरपंच, मोहमदपुर रोही, जिला फतेहाबाद, हरियाणा ने अपनी शादी और भात दोनों में एक रुपया व नारियल लेकर बिश्नोई समाज में एक बड़ी मिसाल कायम की है।

सुर और साधना

सुर और साधना का मणि-कांचन संयोग,
होती अनवरत साधना है सुखद उपयोग।
मन के वीणा-तंत्र में गूँजता हर प्रयोग,
सुर और साधना का मणि-कांचन संयोग...
जब मन की धरती पर श्रद्धा की फुहारें हों,
तन-मन के आँगन में उजियारी की धारें हों।
ताल बने तपस्या, राग बनें संकल्प,
स्वर में जब सच्चाई है मिलता नहीं वियोग।
सुर और साधना का मणि-कांचन संयोग...
स्वर की यात्रा लंबी है, धीरज ही साथी,
हर कठिन मोड़ पर मिलती अपनी ही थाती।
सांस-सांस में बस जाए संगीत का प्रवाह,
यूं ही साधे साधक जब पा ले उपभोग।
सुर और साधना का मणि-कांचन संयोग...
अभिनव हर क्षण अनहद नाद जवान होता,
अन्तर में बैठा कोई दीपक प्राण संजोता।
जग में वही सफल है जो खुद को पहचान ले,
सुर-साधना की राह में मिलता परम प्रयोग।
सुर और साधना का मणि-कांचन संयोग...।

-डॉ. दवीना अमर ठकराल 'देविका'
21, एम.सी. कॉलोनी, हिसार (हरियाणा)
मो.: 9813429790

संयुक्त परिवार और बिखरते रिश्तों की दास्ता

भारतीय समाज की आत्मा यदि किसी एक स्थान पर बसती है, तो वह है- संयुक्त परिवार।

हमारी संस्कृति, हमारे संस्कार और हमारे जीवन के सबसे सुंदर पल इसी व्यवस्था से जन्म लेते हैं। यह किसी एक घर का ढाँचा भर नहीं होता, बल्कि जीवन को जीने की एक विशेष पद्धति होती है- जहां हर रिश्ते की अपनी महक, अपनी गर्माहट और अपनी जिम्मेदारी होती है।

कभी यह परिवार हमारी सबसे बड़ी शक्ति थे, पर समय की रफ्तार ने इन्हें धीरे-धीरे कमजोर करना शुरू कर दिया। आज जब हम 'संयुक्त परिवार' शब्द बोलते हैं, तो वह अक्सर बीते समय की एक याद, पुरानी तस्वीर या फिर किसी कहानी जैसा लगता है।
कभी एक आंगन में कई सूरज उगते थे-

पुराने समय में एक ही आंगन में दादा-दादी, चाचा -चाची, माता-पिता और बच्चे सब साथ रहते थे। दादी की सुबह की पुकार घर को जगाती थी। उनका प्यार और उनकी गालियां भी घर का स्नेह थीं। दादा का हाथ पकड़कर चलने वाले बच्चे जीवन का पहला सबक उसी आंगन की मिट्टी से सीखते थे। जब रसोई से घी की खुशबू उठती थी, तो सभी एक साथ बैठकर खाना खाते थे। दादी हमेशा कहतीं-
'जो परिवार साथ खाता है, वह साथ रहता है।'
और यह सच भी था।

एक साथ भोजन सिर्फ पेट भरना नहीं था- वह एकता, संवाद और अपनापन था। खुशियाँ मनाने की बात आती, तो पूरा घर त्योहार बन जाता। रक्षाबंधन पर बहनों की भीड़ लग जाती। दीवाली की सफाई में कोई बाहरी मजदूर नहीं आता- घर के बच्चे-मर्द सब झाड़ू -पोछा करते थे। संग-साथ की यह खूबसूरती भारतीय समाज को मजबूती देती थी। दु:ख भी आधा होता, और जिम्मेदारियाँ मिलकर उठतीं।

संयुक्त परिवारों ने हमें सिखाया कि दु:ख अकेले नहीं सहना पड़ता। अगर किसी सदस्य को बीमारी घेर लेती, तो पूरा परिवार उसके साथ खड़ा होता। किसी की नौकरी चली जाए, व्यापार डूब जाए- तो बाकी सदस्य कंधा बन जाते। परिवार में किसी युवती की शादी हो, बच्चे का जन्म हो, शिक्षा हो- यह सब मिलकर पूरा होता। संयुक्त परिवार में बच्चों को प्यार भी दोगुना मिलता और अनुशासन भी।

दादा से इतिहास, दादी से संस्कृति, मां से प्रेम और चाची से व्यवहार- हर एक संबंध बच्चे की परवरिश को पूर्ण बनाता था। फिर समय बदला और परिवारों का स्वरूप बदलने लगा। जैसे-जैसे दुनिया बदलने लगी, तकनीक बढ़ी, शहरों के द्वार खुले, नौकरी के अवसर बढ़े। वैसे-वैसे लोग गांव और छोटे कस्बों से महानगरों की ओर बढ़ने लगे। रोजगार की मजबूरियों ने घर से दूरी ला दी। धीरे-धीरे 'अलग रहने' की अवधारणा स्वाभाविक लगने लगी।

संयुक्त परिवारों में जब दो पीढ़ियों के विचार आपस में टकराए, तो आपसी समझ से बात करें जैसी सोच ने जन्म लिया।
'स्वतंत्रता', 'अपना स्पेस', 'अपनी दुनिया'-
ये सब शब्द परिवार को तोड़ने नहीं, छोटा करने लगे।

अब दो भाइयों ने अपने-अपने घर बना लिए। फिर उनका मन नहीं भरा, तो उन्हें अपने बच्चों के लिए दूसरा घर चाहिए था। आंगन धीरे-धीरे कंक्रीट के रास्तों में बदल गया। जहाँ कभी हंसी गूंजती थी, आज ताले झूलते हैं।

बिखरते परिवार- अकेलेपन की बढ़ती लकीरें। आज की सबसे बड़ी समस्या यह नहीं है कि लोग अलग रहते हैं। सबसे बड़ी समस्या यह है कि दिल अलग रहने लगे हैं। एक समय था कि परिवार में 15-20 लोग रहते थे, आज चार लोग एक घर में रहकर भी

एक-दूसरे को समय नहीं दे पाते। दादा-दादी अपने कमरे में अकेलेपन से लड़ते हैं। बच्चे मोबाइल में खो गए हैं। मां-बाप नौकरी और ऑफिस के तनाव में घुलते रहते हैं। रिश्तों में मिठास कम और औपचारिकता बढ़ गई है। त्योहार अब मिलन का अवसर नहीं, फोटो खिंचवाने का अवसर बनते जा रहे हैं।

जब दूरी सिर्फ भौगोलिक नहीं, दिलों की भी हो जाती है। आज का अकेला परिवार अक्सर आर्थिक रूप से तो ठीक होता है, पर भावनात्मक रूप से बहुत कमजोर। बच्चों में धैर्य एवं सहनशीलता कम होती है। बुजुर्गों का सम्मान धीरे-धीरे घटता है, माता-पिता तनाव में रहते हैं, परिवार का हर सदस्य अलग-थलग महसूस करता है। सुरक्षा की भावना कम हो जाती है, रिश्तों में जल्दी दरार आ जाती है।

सबसे दु:खद बात यह है कि घर में रहने वाले लोग भी आज एक-दूसरे से बातें कम करते हैं।

परिवार में 'साथ' तो है,
पर 'सहयोग' नहीं।
घर में 'रिश्ते' तो हैं,
पर 'रिश्तेदारी' नहीं।

संयुक्त परिवार क्यों जरूरी थे और आज भी क्यों जरूरी हैं? संयुक्त परिवार का अर्थ यह नहीं कि लोग एक कमरे में कैद हो जाएँ। इसका अर्थ है- एक-दूसरे के लिए खड़े रहना, संवाद बनाए रखना और हर उम्र में सहारा मिलना।

संयुक्त परिवार की खासियतें आज भी मूल्यवान हैं- बच्चों को संस्कार और सुरक्षा। बच्चे जब दादा-दादी के बीच पलते हैं, तो उनमें संस्कार, धीरज और संवेदनशीलता बढ़ती है।

बुजुर्गों की सेवा और सम्मान- वे अकेलेपन से बचते हैं और अपने अनुभव नई पीढ़ी तक पहुँचाते हैं।
महिलाओं पर कम भार- अकेली मां सब कुछ नहीं संभाल पाती। संयुक्त परिवार में हर काम में मदद रहती है।
आर्थिक सुरक्षा- एक आय कम हो तो दूसरे सदस्य संभाल लेते हैं।
भावनात्मक समर्थन- जीवन में कई बार ऐसा समय आता है जब हमें सिर्फ किसी के पास बैठने की जरूरत होती है। यह सहारा संयुक्त परिवार अधिक मजबूती से दे सकता है।

हम परिवार को कैसे जोड़ सकते हैं?

जरूरी नहीं कि सभी एक ही छत के नीचे रहें, लेकिन यह जरूरी है कि दिल एक छत में रहें।

1. संवाद बढ़ाएँ- रिश्ते खामोशी से टूटते हैं, बातचीत से जुड़ते हैं।
2. बुजुर्गों का सम्मान करें। वे परिवार की जड़ें हैं। जड़ें सूख जाएँ, तो पेड़ भी गिर जाता है।
3. त्योहारों को परिवारोत्सव बनाएं। त्योहार सिर्फ छुट्टी नहीं, रिश्तों की धूल हटाने का मौका है।
4. बच्चों को परिवार का महत्व सिखाएं। वरना आने वाली पीढ़ी पूरी तरह अकेली हो जाएगी।
5. साथ मिलकर निर्णय लें। घर का फैसला घर के सभी लोगों की सहमति से हो। यही परिवार की असली खूबसूरती है।

निष्कर्ष- परिवार टूटे नहीं, समय बदले तो बदले पर रिश्ते न बदलें। समय का बदलाव स्वाभाविक है। रोजगार, शिक्षा और स्वतंत्रता- इन सब ने जीवन को नया रूप दिया है। पर यह बदलाव तब तक अच्छा है जब तक वह हमारे रिश्तों को तोड़ता नहीं, सिर्फ थोड़ा अलग दिशा देता है। आज जरूरत इस बात की नहीं कि हम संयुक्त परिवार को पुराने रूप में लाएँ। जरूरत है कि हम संयुक्त परिवार की आत्मा को बचाए रखें-

प्यार, सम्मान, सहयोग, संवाद और साथ।
रिश्ते ईंटों से नहीं, दिलों की धड़कनों से बनते हैं।
घर छोटा हो या बड़ा,
दिलों में जगह बड़ी होनी चाहिए।

- रेखा बिश्नोई, हरदा, मध्यप्रदेश
E-mail: rekhabishnoi29@gmail.com

वैष्णव परंपरा में गुरु जांभोजी और बिश्नोई धर्म का स्थान

भारतीय धार्मिक परंपरा अनेक धाराओं और संप्रदायों का संगम है- जहाँ शास्त्रीय दर्शन, लोकभक्ति और सामाजिक आचरण एक-दूसरे के साथ घुलमिल कर संस्कृति की समृद्धि का आधार बने। इनमें वैष्णव परंपरा ने प्रेम-भक्ति, करुणा, अहिंसा और सामाजिक समरसता के सिद्धांतों के माध्यम से जन-जीवन को दृढ़ रूप से प्रभावित किया है। वैष्णव साधना और उसके अनेक संत-समूहों ने स्थानीय, प्रादेशिक और राष्ट्रीय स्तर पर समाज सुधारक की भूमिका निभाई। इसी दायरे में राजस्थान के संत गुरु जांभोजी (जंभेश्वर जी महाराज) द्वारा प्रतिपादित बिश्नोई पंथ एक ऐसा धार्मिक-सामाजिक आदर्श है जिसने न केवल भक्ति का मार्ग अपनाया, बल्कि प्रकृति-संरक्षण, नैतिक अनुशासन और सामाजिक समानता को भी धर्म का अंग बनाया।

यह आलेख तीन स्तरों पर विचार करता है- (1) वैष्णव परंपरा के दार्शनिक आधार और उसका सामाजिक प्रभाव, (2) गुरु जांभोजी का जीवन, जांभवाणी और बिश्नोई धर्म के 29 नियमों का विश्लेषण तथा (3) आधुनिक परिप्रेक्ष्य में बिश्नोई विचारधारा की प्रासंगिकता और नीति-स्तरीय, शैक्षणिक व सामाजिक अनुशासन के लिए निहित संदेश। उद्देश्य यह है कि जांभोजी की शिक्षाओं को वैष्णव आंक-धारणा के भीतर सही सन्दर्भ में रखा जाए और यह दिखाया जाए कि कैसे प्राचीन लोकधार्मिक आदर्श आधुनिक चुनौतियों- पर्यावरण संकट, सामाजिक अपक्षरण और नैतिक गिरावट के प्रति उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

इस आलेख का मुख्य उद्देश्य है- वैष्णव परंपरा में गुरु जांभोजी और बिश्नोई धर्म के स्थान व प्रभाव का समग्र परीक्षण। अध्ययन में व्यापक साहित्य-आधार (लोकग्रंथ, जांभवाणी, संबंधित शोध-पत्र व क्षेत्रीय लोककथाएँ), तुलनात्मक दार्शनिक विश्लेषण और ऐतिहासिक-समाजिक परिप्रेक्ष्य का उपयोग किया गया है। पाठ्य और मौखिक स्रोतों के समन्वय से बिश्नोई सिद्धांतों को वैष्णव दर्शन के प्रमुख तत्वों के साथ जोड़ा गया है तथा आधुनिक नीतिगत और पर्यावरणीय विमर्श के साथ उनकी संगतता पर विचार किया गया है।

वैष्णव परंपरा: सांस्कृतिक-दार्शनिक आधार- वैष्णव परंपरा भारतीय धर्म-संस्कृति का एक महत्वपूर्ण प्रवाह है। इसकी जड़ें वेदों और उपनिषदों में निहित हैं, किन्तु मध्यकालीन भक्ति आंदोलन ने इसे जन-मंच पर स्थापित किया। वैष्णववाद का केंद्र है- विष्णु (या उनके अवतार श्रीकृष्ण/श्रीराम) में अनन्य भक्ति, सर्वत्र ईश्वर-दर्शन तथा आत्मा और परमात्मा के बीच सम्बन्ध की व्याख्या। वैष्णव दर्शन ने प्रेम-भक्ति (निष्ठा), सेवा-भाव (सेवा) और अहिंसा (अहिंसा परमो धर्म) पर विशेष जोर दिया। संतों ने धार्मिक ज्ञान को लोकभाषा में प्रस्तुत कर आम जन में ईश्वरीय प्रेम और सामाजिक समानता का प्रचार किया। रामानुज, वल्लभाचार्य, माध्वाचार्य, चैतन्य महाप्रभु जैसे प्रमुख आकृतियाँ वैष्णव परंपरा के विविध मार्गों को जन -आंदोलन में परिवर्तित करने का श्रेय रखती हैं। ये संप्रदाय केवल आध्यात्मिक न होकर सामाजिक-नैतिक परिवर्तन के वाहक भी बने।

वैष्णवता के प्रमुख तत्त्व

1. भक्ति- नि:स्वार्थ प्रेम और समर्पण।
2. अहिंसा व करुणा- सभी जीवों के प्रति दया। जीव-हिंसा का विरोध।
3. सर्वभूतहिताय- सर्वसंकल्पना कि सभी का कल्याण परम धर्म।
4. सामाजिक समरसता- जाति-धर्म को पीछे छोड़कर समानता।
5. जीव-प्रकृति एकात्मता- प्रकृति में ईश्वर का प्रतिबिंब, इसलिए संरक्षण अनिवार्य।

इन सिद्धांतों ने विभिन्न क्षेत्रों में प्रभाव छोड़ते हुए

स्थानीय संस्करणों- जैसे बिश्नोई परंपरा का मार्ग प्रशस्त किया।

गुरु जांभोजी: जीवन, उपदेश और सन्दर्भ

गुरु जांभोजी का जन्म पीपासर (नागौर-जिला) या कुछ स्रोतों के अनुसार आसपास के किसी गाँव में 15वीं शताब्दी में हुआ- लोकपरंपरा में उनका जन्म संकेत 1450-1536 ई. के परिवेश में मिलता है। बचपन से ही वैराग्य, सिद्धि-लक्ष्य और करुणा की प्रवृत्ति उनके चरित्र का हिस्सा थी। उन्होंने साधना, ध्यान और समाज सुधार के माध्यम से स्थानीय जनता को धार्मिक-सामाजिक अनुशासन की ओर प्रेरित किया। जांभोजी ने अपने उपदेशों को सरल भाषा में लोकभाषा मरुभाषा में प्रस्तुत किया। इन्हें जनमानस तक प्रसारण व स्मरण में सहजता मिली और जनता तक पहुँचना आसान हुआ।

उनकी वाणी जांभवाणी-लोकभाषा राजस्थानी में संरचित है। इन वाणियों में जीवन-मूल्यों, करुणा, वृक्ष-पालन, धर्म-अनुशासन, स्त्री-सम्मान और आत्म -नियमन के निर्देश मिलते हैं। जांभोजी ने जीवन के व्यवहारिक एवं आध्यात्मिक कल्याण को एक साथ जोड़ा। भक्ति के साथ कर्म और सामाजिक उत्तरदायित्व को समान-स्तर पर रखा।

बिश्नोई पंथ: 29 (20+9) नियम और उनका अर्थ-

गुरु जांभोजी द्वारा प्रतिपादित बिश्नोई नामकरण- 'बीस+नौ = 29 नियम'- स्पष्ट संकेत देता है कि यह धर्म नारी, पुरुष, पेड़-पौधा, जल-वायु और सामाजिक आचरण सहित विस्तृत जीवन-नियमों का समुच्चय है। इन 29 नियमों को स्थानीय संस्कृति एवं पारिवारिक व्यवहार में लागू करने का आग्रह किया गया। यहाँ प्रमुख नियमों का सार दिया जा रहा है, यह विष्णु (वैष्णव) का यही पर्याय लेने में कोई झिझक नहीं माननी चाहिए ।

1. ईश्वर की एकता में श्रद्धा और आस्था।
2. प्रतिदिन पूजा-ध्यान तथा नाम स्मरण।
3. जीव हत्या से परहेज- नशों, मांसाहार का त्याग।
4. वृक्षों का संरक्षण- खासकर खेजड़ी व स्थानीय वनस्पतियाँ।
5. जल स्रोतों की रक्षा तथा अनावश्यक बर्बादी का त्याग।
6. चोरी, झूठ, कपट, निंदा और व्यभिचार का परित्याग।
7. नशा (शराब, मादक द्रव्य) का त्याग।
8. स्त्री सम्मान तथा परिवारिक मर्यादा का पालन।
9. सामाजिक सहानुभूति, परोपकार व संकट में सहायता।
10. स्वच्छता (शरीरिक व सामाजिक) का पालन।

(बाकी नियम भी इसी तरह जीवन के व्यवहारिक निर्देश देते हैं- अल्पाहार, संयम, सादगी, ग्राम-समुदाय की रक्षा, आदि।)

तन,मन धोइए, संजम होइये। (जम्भवाणी)

इन नियमों का अभिप्राय साधारण है- धर्म को जीवन-शैली बना देना। प्रत्यक्ष भक्ति के साथ-साथ व्यवहारिक नैतिकता को स्थायी करना।

जांभवाणी: दार्शनिक-नैतिक विश्लेषण

जांभवाणी केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं, यह लोकदर्शन, पर्यावरण-नीति और सामाजिक आचारशास्त्र का समेकित स्वरूप है। इसके कुछ प्रमुख दार्शनिक दृष्टिकोण निम्न हैं:

1. **अद्वैत/विष्णु**- एकत्व का लोकपूरक रूप- जांभोजी ने विष्णु को सर्वव्यापी माना। इस दृष्टि से प्रत्येक जीव व प्रकृति में ईश्वर की उपस्थिति स्वीकार की गई। यह वैष्णव अद्वैत के लोक-विन्यास से संबंधित है- जहाँ दैवीय का अनुभव जीवन के हर आयाम में होना चाहिए।

2. **भक्ति+कर्म का समन्वय**- वे केवल मंदिर -भक्ति पर विश्वास नहीं रखते थे। उन्होंने परोपकार, सामाजिक कर्तव्य और पर्यावरण-संरक्षण को भगवान -भक्ति का ही अंग माना।

पैलां किरिया आप कमाइये, तां अवरा न फुर्माइये।

3. **नैतिकता का व्यवहारिक स्वरूप**- सत्य, संयम, स्वच्छता और सादगी जांभवाणी में बार-बार आते हैं। ये मूल्य समाजिक अनुशासन और दीर्घकालिक सामुदायिक जीवन के लिए आवश्यक हैं।

4. **प्रकृति-धर्म का संवर्धन**- वृक्षों और पशुओं की रक्षा को धार्मिक कर्तव्य घोषित करना, पर्यावरणीय चेतना का सीधा परिणाम है जो प्राचीन उपनिवेशी-लोक कथाओं से अलग, आध्यात्मिक-कायिक दायित्व बन जाता है।

जंभवाणी की भाषा लोक-हृदय में पहुँचने वाली और व्यावहारिक निर्देशों से परिपूर्ण है- यही उसकी ताकत और शाश्वतता का कारण है।

ऐतिहासिक घटना- खेजड़ली (1730): बिश्नोई बलिदान- बिश्नोई इतिहास की सबसे चर्चित घटना खेजड़ली (जोधपुर के निकट) में हुई। जब सरकारी या निजी कटाई के दौरान खेजड़ी वृक्ष काटने की कोशिश हुई, तब अमृता देवी और आधा दर्जन से अधिक बिश्नोई महिलाओं व पुरुषों ने वृक्षों की रक्षा हेतु खुद को वृक्षों के चारों ओर बाँध लिया और परिणामस्वरूप उनकी निर्मम हत्या कर दी गई। कुल मिलाकर 363 बिश्नोइयों ने अपना बलिदान दिया। इस घटना का ऐतिहासिक और प्रतीकात्मक महत्व अत्यधिक है- यह न केवल साधारण महिला/ लोक-नारी का नेतृत्व दिखाती है, बल्कि पर्यावरण की रक्षा के लिए सर्वोच्च बलिदान का उदाहरण बन गई जिसने बाद के आंदोलनों (जैसे चिपको आंदोलन) को प्रेरित किया। यह घटना बिश्नोई दर्शन के व्यवहारिक सत्यापन के रूप में चिरस्थायी है।

बिश्नोई धर्म का सामाजिक-आर्थिक प्रभाव

बिश्नोई समुदाय केवल धार्मिक रूप से नहीं, बल्कि सामाजिक व आर्थिक रूप से भी विशिष्ट रहा है। उनकी जीवनशैली साधारण होती है। कम खपत, समुदाय-आधारित सहकारिता और संसाधनों का संरक्षण प्राथमिकता है। इससे निम्नलिखित प्रभाव दिखाई देते हैं:

1. **स्थिर कृषि-पद्धति**- वृक्षों एवं जल संरचनाओं की रक्षा से स्थानीय पारिस्थितिकी स्थिर रहता है और दीर्घकालिक कृषि-उत्पादकता बनी रहती है।

2. **समुदाय-अनुशासन**- सामाजिक नियमों से अपराध, भ्रष्टाचार और नैतिक पतन में कमी आती है।

3. **नारी भागीदारी**- खेजड़ली के बलिदान जैसे मामलों में महिलाओं की अग्रणी भूमिका सामाजिक सशक्तिकरण को दर्शाती है।

4. **सामाजिक पूँजी**- पारम्परिक नीतियाँ समुदाय के भीतर सहयोग और आपसी सहायता को बढ़ाती हैं, जो विपरीत परिस्थितियों में सहायक सिद्ध होती हैं।

इन गुणों के कारण बिश्नोई आदर्श स्थानीय सततता हेतु एक प्रभावी सामाजिक-आधार प्रस्तुत करता है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य- पर्यावरण, नीति और समाज गुरु जांभोजी की शिक्षाओं की समकालीन प्रासंगिकता कई स्तरों पर ज्वलंत है। यहाँ विस्तृत रूप से आधुनिक संदर्भों में उनके सिद्धांतों का विश्लेषण दिया जा रहा है।

1. **जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता संरक्षण:** आज वैश्विक तापमान वृद्धि, जैव विविधता ह्रास और वनों की कटाई जैसी समस्याएँ मानवता के लिये निर्णायक चुनौतियाँ हैं। बिश्नोई दर्शन के वृक्ष-पालन और जीव-रक्षा के नियम सीधे तौर पर इन समस्याओं के समाधान से जुड़ते हैं। स्थानीय स्तर पर वृक्षों का संरक्षण जल-संचयन, भूमि अपरदन रोधी, और जलवायु स्थिरीकरण हेतु प्रभावी है। बिश्नोई सामुदायिक व्यवहार प्राकृतिक संसाधनों के सतत् प्रबंधन का उदाहरण प्रस्तुत करता है, जिसे आधुनिक नीति-निर्माताओं द्वारा संरक्षण योजनाओं में अपनाया जा सकता है।

2. **सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) के साथ संगति:** यूएन के सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) में पर्यावरण संरक्षण, जीवन पर जल की उपलब्धता, सतत शहरी व ग्रामीण जीवन, तथा जलवायु कार्रवाई शामिल हैं। बिश्नोई सिद्धांत इन लक्ष्यों से मेल खाते हैं- विशेषत: SDG 13

(Climate Action) [SDG 15 (Life on Land)] और SDG 6 (Clean Water and Sanitation)। स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाकर और लोक-ज्ञान (Traditional Ecological Knowledge) को नीति-निर्माण में जोड़कर SDGs की प्राप्ति की दिशा में ठोस पहल की जा सकती है।

3. **पारंपरिक ज्ञान और आधुनिक विज्ञान का समन्वय:** बिश्नोई परंपरा में निहित पारंपरिक पारिस्थितिक ज्ञान (Traditional Ecological Knowledge) का वैज्ञानिक अध्ययन और समेकन आधुनिक संरक्षण रणनीतियों के लिये लाभदायक है। उदाहरणार्थ- सूक्ष्म वन-प्रबंधन, स्थानीय वनस्पति का उपयोग, तथा सूखा प्रबंधन की पारम्परिक विधियाँ आज के जल संकट में अनुपम योगदान दे सकती हैं। नीति-निर्माता और वैज्ञानिक यदि इन लोक-नीतियों को मानक संरक्षण मॉडल के साथ संयोजित करें तो अधिक टिकाऊ परिणाम मिल सकते हैं।

4. **सामुदायिक-आधारित संरक्षण मॉडल:** आज कई देशों में सामुदायिक-आधारित संरक्षण मॉडल (Community & Based Natural Resource Management) की बात होती है। बिश्नोई समुदाय एक जीवंत उदाहरण है जहाँ स्थानीय नियम स्वयं-नियमन, सामाजिक शमन और समर्पण के माध्यम से संसाधनों की रक्षा होती है। यह मॉडल बड़े पैमाने की राज्य-केन्द्रित नीतियों की तुलना में अधिक स्थायी और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल होता है।

5. **शिक्षा और मूल्यों का समावेश:** आधुनिक शिक्षा प्रणाली में बिश्नोई नैतिकता, पर्यावरण नैतिकता, करुणा, सादगी को समाविष्ट करने से युवाओं में दीर्घकालिक नैतिक नेतृत्व पैदा हो सकता है। स्कूलों में स्थानीय इतिहास (जैसे खेजड़ली घटना), पर्यावरण पाठ्यक्रम और सामुदायिक-प्रोजेक्ट्स के माध्यम से यह ज्ञान व्यावहारिक रूप से विकसित किया जा सकता है।

6. **नीति-सिफारिशें और कानूनी संरचना:** सरकारें स्थानीय धार्मिक-परंपरागत समूहों के अनुभवों को संरक्षण नीति में शामिल कर सकती हैं। **उदाहरणतः** वृक्ष संरक्षण के लिये स्थानीय नियमों को कानूनी मान्यता देना, सामुदायिक पेयजल प्रबंधन को अनुदान देना और पारंपरिक संरक्षण क्षेत्रों को संरक्षित क्षेत्रों के रूप में मान्यता देना। ये उपाय बिश्नोई मॉडल को औपचारिक समर्थन दे सकते हैं।

बिश्नोई दर्शन के बहु-आयामी प्रभाव:

खेजड़ली बलिदान का अंतरराष्ट्रीय प्रभाव- खेजड़ली के बलिदान की घटना ने भारतीय पर्यावरणीय आंदोलनों को ऐतिहासिक संदर्भ प्रदान किया। चिपको आंदोलन और बाद के लोक-आधारित आंदोलनों में खेजड़ली का सांकेतिक योगदान दिखता है। यह दिखाता है कि धार्मिक-नैतिक प्रेरणा किस तरह सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन का कारण बन सकती है।

स्थानीय वन संरक्षण परियोजनाओं में बिश्नोई सहभागिता

वर्तमान में कुछ स्थानीय परियोजनाएँ बिश्नोई समुदाय के ज्ञान और सहभागिता को जोड़कर सफल संरक्षण मॉडल विकसित कर रही हैं- जैसे चरागाह प्रबंधन तथा जल-भंडारण संरचनाएँ। इन परियोजनाओं के माध्यम से बिश्नोई लोकनीति का संचालन आधुनिक तकनीक के साथ मिलाया गया है, जिससे दोनों का समन्वय टिकाऊ समाधान प्रदान करता है।

आंतरिक विरोधाभास, चुनौतियाँ और आलोचनाएँ: हर मॉडल की तरह बिश्नोई परंपरा को भी चुनौतियाँ और आलोचनाएँ मिली हैं-

1. **आधुनिक आर्थिक दबाव**- आर्थिक विकास व भूमि-संबंधी दबाव के कारण कुछ समुदायों में पारंपरिक नियमों का पालन कठिन हो सकता है।
2. **युवा पीढ़ी का परिवर्तित दृष्टिकोण**- शहरीकरण व वैश्वीकरण के कारण युवा वर्ग में पारंपरिक जीवन-शैली का त्याग देखना पड़ रहा है।
3. **कानूनी और प्रशासनिक समायोजन की कमी**-

लोक-परम्पराओं को औपचारिक कानूनी ढाँचे में समाहित करने में कठिनाइयाँ आती हैं। अक्सर प्रशासनिक हितों व निजी भूमि-हक्कों के बीच टकराव होता है।

4. **धार्मिक-आधारित सख्ती का दुरुपयोग**- कुछ परिस्थितियों में धार्मिक प्रथा को कट्टरता के रूप में समझा जा सकता है, जिसका सामाजिक संतुलन पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ सकता है यदि नियम लचीलेपन के बिना लागू किये जाएँ।

इन चुनौतियों के बावजूद बिश्नोई मॉडल के सकारात्मक पहलुओं का संरक्षण और संवर्धन करने योग्य योग्यता स्पष्ट है।

नीति-प्रस्ताव और व्यवहारिक सिफारिशें

1. **स्थानीय ज्ञान के दस्तावेजीकरण व अध्ययन**- बिश्नोई व अन्य पारंपरिक सम्प्रदायों का व्यवस्थित दस्तावेजीकरण कर वैज्ञानिक व नीतिगत रूप से उनका उपयोग किया जाना चाहिए।

2. **सामुदायिक काउंसिलों को आधिकारिक मान्यता**- स्थानीय नियमों व ग्राम-वार्डों को संरक्षण कार्य में भागीदार बनाकर अधिकारिक अनुदान दिया जाना चाहिए।

3. **शिक्षा पाठ्यक्रम में पर्यावरणीय लोक-ज्ञान का समावेश**- प्राथमिक व उच्चतर माध्यमिक स्तर पर स्थानीय ऐतिहासिक घटनाओं (खेजड़ली) व पारंपरिक संरक्षण-तथ्यों को अनिवार्य किया जाए।

4. **स्थायी आजीविका व पारंपरिक रोजगार**- पारंपरिक कृषि, वानिकी व हस्तशिल्प के माध्यम से स्थानीय आजीविका के अवसर दिए जाएँ ताकि लोग पारंपरिक नियमों का पालन करके भी आर्थिक रूप से सुरक्षित रहें।

5. **नेतृत्व विकास व युवाओं की भागीदारी**- युवाओं के लिये प्रशिक्षण व नेतृत्व कार्यक्रम चलाकर पारंपरिक दृष्टिकोण का नव: आविष्कार (recontextualize) किया जाना चाहिए।

6. **कानूनी संरक्षण (Legal Recognition)**- धार्मिक-परंपरागत संरक्षण-क्षेत्रों को कानूनी संरक्षण देने हेतु नीतियाँ बनाई जाएँ ताकि सामुदायिक संरक्षण को औपचारिक सुरक्षा प्राप्त हो।

निष्कर्ष: वैष्णव परंपरा में बिश्नोई का स्थान और विश्व-गौरव गुरु जांभोजी और बिश्नोई धर्म वैष्णव परंपरा की एक अत्यंत संवेदनशील, व्यवहारिक और नैतिक शाखा है। उन्होंने वैष्णव भक्ति के सिद्धांतों- अहिंसा, करुणा, सर्वभूतहिताय को सामाजिक आचरण, पर्यावरणीय प्रतिबद्धता और समुदाय-आधारित संगठन में बदल दिया। बिश्नोई समाज ने यह दिखाया कि धार्मिक-आधार पर संरचित मानवीय संवेदना किस तरह दीर्घकालिक सामाजिक और पारिस्थितिक लाभ दे सकती है।

समकालीन विश्व के लिए बिश्नोई दृष्टिकोण का संदेश स्पष्ट है- यदि मानवता का लक्ष्य सततता, समानता और करुणा है, तो पारंपरिक लोक-ज्ञान और धार्मिक-आधारित नैतिकता को आधुनिक नीतियों, विज्ञान और शिक्षा से जोड़ना अनिवार्य है। गुरु जांभोजी का युगीन योगदान- प्रकृति की रक्षा, सादगी, और जीवन के प्रति सकारात्मक व्यवहार न केवल वैष्णव परंपरा के भीतर अमूल्य है, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी आज के संकटों के लिए प्रेरक और व्यवहार्य समाधान प्रस्तुत करता है।

संदर्भ:

1. जांभवाणी, गुरु जांभोजी की वाणियाँ (लोक-संग्रह)।
2. स्थानीय ग्रंथ व शोध-लेख, बिश्नोई समाज के ऐतिहासिक दस्तावेज।
3. खेजड़ली दस्तावेजीकरण और लोककथाएँ।
4. मध्यकालीन भक्ति आंदोलन: तुलनात्मक अध्ययन (रामानुज, चैतन्य आदि)।
5. सामुदायिक-आधारित संरक्षण पर आधुनिक नीतिगत रिपोर्टें (सैद्धान्तिक संदर्भ)।

-डॉ. राजा राम

गाँव व डा. शेखुपुर दडोली,

जिला फतेहाबाद, हरियाणा

मो.: 9896789100

पढ़ ले गुण ले सबदवाणी

पढ़ ले गुण ले सबदवाणी, तेरा हो जाए उद्धार।
जीवन विधि को जानकर तू, हो जा भव से पार॥
वीदा बोला जाम्भोजी से, ये कैसी आपकी काया।
जिससे आए दिव्य सुगंधी, क्या कोई इत्र लगाया॥
गुरु जम्भेश्वर भगवान ने फिर, ऐसा सबद सुनाया।
जिसको सुनकर भक्त जनों को, अद्‌भुत आनंद आया॥

ओ३म मोरे अंग न अलसी तेल न मलियो, ना परमल पीसायो।
जीमत पीवत भोगत विलसत दीसां नाहीं, महापण को आधारूं।
अड़सठ तीरथ हिरदा भीतर, बाहर लोकाचारूँ।
नान्ही मोटी जीया जूणी, एती सांस फुरंते सारूं॥

अर्थात्-

न अलसी का तेल व न उबटन लगाई।
कोई सुगंधित वस्तु भी, देह पर नहीं लगाई॥
खाना पीना भोगना, दुर्गंध के आधार।
मुझको नहीं ये चाहिए, द्रव्यों के आहार॥
खाना पीना होता है, शरीर का आधार।
मैं सब का आधार हूं, मेरा न कोई आधार॥
शरीरधर्मिता से परे, है यह रूप हमारा।
भौतिक किसी पदार्थ का, चाहिए नहीं सहारा॥
अड़सठ तीर्थ हृदय में, नित्य करूं स्नान।
चेतनसत्ता रूप मैं, परमपिता भगवान॥
मानव जैसा तो मेरा, जो देखो व्यवहार।
इसको मान लेना तू, बस एक लोकाचार॥
मानव सा व्यवहार तो, बस एक लोकाचार।
भीतर ध्यान लगाकर तू, हो जा भव से पार॥
उधरण ने गुरु जाम्भो जी से, पूछा एक सवाल।
हे गुरुदेव आपकी उम्र है कितने साल॥

ओ३म जद पवन न होता पाणी न होता, न होता धर गैणारु।
चंद न होता सूर न होता, न होता गिंगधर तारूं।
गऊ न गोरू माया जाल न होता, न होता हेत पियारूं।
माय न बाप न बहण न भाई, साख न सैण न होता।
न होता पख परवारुं।
लख चौरासी जीया जूणी न होती, न होती बणी अठारा भारुं।
सप्त पताल फुणींद न होता, न होता सागर खारूं।
अजिया सजिया जीया जूणी न होती, न होती कुड़ी भरतारूं।
अर्थ न गर्थ न गर्व न होता, न होता तेजी तुरंत तुखारूं।

अर्थात्-

पृथ्वी जल आकाश हवा, हुआ न करते सारे।
चांद सूरज भी नहीं, ना होते थे तारे॥
गाय बैल व माया जाल, और न होता प्यार।
मात-पिता भाई बहन, और न होता परिवार॥
दोस्त न दुश्मन कोई, न कोई रिश्तेदार।
कुटुंब कबीले भी नहीं, न था यह संसार॥
लख चौरासी योनि का भी, न था तब विस्तार।
अठारह लाख वनयोनि, का भी नहीं था भार॥
शेषनाग भी न होता, न सातों पाताल।
खारे जल से भरा हुआ, न समुद्र था विशाल॥
जड़ चेतन सृष्टि न थी, न ब्रह्मा विष्णु महेश।
इस मिथ्या माया का भी, न था कोई लेश॥
घोड़े तेज रंगीले, और धन दौलत अभिमान।
ये सब भी तब थे नहीं, न था गर्व गुमान॥

म्हे तदपण होता अबपण आछै, बल बल होयसां,
कह कद कद का करूं विचारूं।

अर्थात्-

मैं तो तब था जब न था, सृष्टि का विस्तार।
अब हूँ आगे भी रहूं, कब का करूं विचार॥
मैं हूँ काल से परे, अविनाशी कहलाऊं।
अब मैं आपको मेरी, कितनी उम्र बताऊं॥

-बनवारी लाल बिश्नोई, एडवोकेट
पूर्व निदेशक, अभियोजन विभाग, हरियाणा
मो. 9467297883

धार्मिक अनुष्ठानों के बिश्नोई लोकगीतों में संस्कृति चित्रण

भारतीय संस्कृति अति प्राचीन एवं विश्व की महान संस्कृति है, जो अपने कलेवर में अनेक विशेषताओं को लिए हुए है। हमारे देश के सभी अवतार, संत-महात्मा एवं महापुरुष आदि इन विशेषताओं को अपनाकर अपनी मंजिल तक पहुंचने में सफल रहे हैं। इसके साथ-साथ देश के सभी ऋषि-मुनियों एवं संत-महात्माओं का भारतीय संस्कृति के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राम-कृष्ण, गौतम बुद्ध, गुरु जाम्भोजी, नानक एवं महात्मा गांधी आदि इसी तरह की विभूतियां रही हैं, जिन्होंने अपने आदर्शों एवं विचारों के जल से इसे सींचा है। बिश्नोई पंथ के प्रवर्तक गुरु जाम्भोजी के जल से इसे सींचा है। बिश्नोई पंथ के प्रवर्तक गुरु जाम्भोजी के सत्य, अहिंसा, दया, परोपकार, समन्वय भावना, कर्मनिष्ठा एवं पर्यावरण संरक्षण आदि विशेषताओं को स्थापित करके मूर्ति पूजा, आडम्बर, पाखंड, निंदा, झूठ एवं हिंसा का विरोध करते हुए मानव जाति को जीवन जीने का सरल रास्ता बताया था। गुरु जाम्भोजी के विचारों की यही प्रमुख बातें बिश्नोई समाज के धार्मिक लोकगीतों में अभिव्यक्त हुई है जिन पर भारतीय संस्कृति की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इसी कारण बिश्नोई लोकगीत भारतीय लोक साहित्य के अभिन्न अंग बने हुए हैं और साथ ही अपने वैशिष्ट्य के कारण अपनी अलग पहचान बनाये हुए हैं।

हमारे वेद ज्ञान के अक्षय भंडार हैं और उनके ज्ञान को सर्वोपरि माना जाता है। इसी ज्ञान को गुरु जाम्भोजी ने अपनी सबदवाणी में प्रकट किया है और कहा है-

मोरा उपख्यान वेदूं कण तंत भेदूं
शास्त्रों पुस्तके लिखणां न जाई।
मोरा सबद खोजो ज्यूं सबदे सबद समाई।[1]

गुरु जाम्भोजी की इसी शिक्षा का प्रभाव हमें बिश्नोई लोकगीतों में दिखाई देता है।

हमारे देश में कर्म एवं कर्मफल के महत्व को स्वीकार किया गया है। अच्छे कर्म करने वाले का भौतिक जीवन सुख के साथ व्यतीत होता है और बुरे कर्म करने वालों को बार-बार जन्म लेने का कष्ट भोगना पड़ता है। भारतीय संस्कृति की इसी विशेषता के कारण लोग बुरे कर्मों से दूर एवं अच्छे कर्मों की ओर अग्रसर होते रहे हैं। भगवान कृष्ण ने भी गीता में कहा है कि सच्चा कर्मयोगी ही सांसारिक बन्धन से मुक्त होने में सफल होता है।[2] ऐसे कर्मयोगी को ही अपने श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा भगवद् रूपी शांति की प्राप्ति होती है।[3] गुरु जाम्भोजी का दर्शन भी कर्ममय जीवन पर आधारित है। उन्होंने सर्वाधिक बल उत्तम कर्मों पर ही दिया है। उनके अनुसार उत्तम कर्मों का दोहरा लाभ है- एक तो उत्तम कर्मों से मनुष्य का भौतिक जीवन सुखमय बनता है और दूसरा उत्तम कर्म मोक्ष प्राप्ति में सहायक होते हैं।[4] इसी तरह बुरे कर्म करने वाला आवागमन के चक्कर में रहता है।[5] मनुष्य जैसे कर्म करता है, उसको वैसा ही फल मिलता है, जिसमें विष्णु का कोई दोष नहीं है।

विसन नै दोस किसौ रे प्राणी, तेरी करणी का उपगारूं।[6]

भारतीय संस्कृति के कर्मफल का यह सन्देश बिश्नोई लोकगीतों में भी अभिव्यक्त हुआ है। वहां भी बुरे कर्मों को त्यागकर अच्छे कर्म करने पर बल दिया गया है।

हंसा रे पीणों गंगाजळ नीर, कोई गंगाजळ नीर।
पालरियो पीणों छोड़ द्यो॥
हंसा रे लेल्यो जम्भेश्वर गोनाम, जम्भेश्वर गो नाम।
भजना गी बांधो गांठड़ी॥
हंसा रे चुगल्यो-चुगल्यो मोतीड़ा गी चूंण, कोई मोतीड़ा गी चूंण।
कांकरा गो चुगणों छोड़ द्यो॥[7]

यहां गंगाजळ एवं 'मोतीड़ा गी चूंण' अच्छे कर्म के प्रतीक हैं तो पालरियो एवं कांकरा बुरे कर्मों के प्रतीक हैं। अच्छे कर्म करने एवं बुरे कर्मों से दूर रहने के साथ-साथ बिश्नोई लोकगीतों में कर्मफल को भी महत्व एवं बुरे कर्मों से दूर रहने के लिए मनुष्य को ज्ञान होना आवश्यक है। ज्ञान के आधार पर ही मनुष्य को निरन्तर यह समझना होगा कि सांसारिक वैभव एवं रिश्ते-नाते अस्थायी हैं और अवगुण ही मनुष्य को बुरे कर्मों की ओर अग्रसर करते हैं। इसलिए बिश्नोई लोकगीतों में भौतिक वस्तुओं के आकर्षण एवं अवगुणों से दूर रहने के लिए प्रेरित किया गया है।

मेहल-माहळिया कुटुम्ब-कबिलो कोई काम नहीं आवै लो।[8]

माया के प्रभाव से मनुष्य बुरे कर्म करता है और ज्ञान होने पर वह बुरे कर्मों से बचने का प्रयास करता है। चौरासी लाख योनियों के कष्टों को देखकर वह आवागमन

से मुक्त होना चाहता है और भगवान से प्रार्थना करता है।

मेरी चौरासी लाख जूंण हटा र्‌यो, ओ भासड़ा गा बदरीनाथ।[9]

इस तरह भारतीय संस्कृति की कर्मानुसार फल मिलने एवं अच्छे कर्म करने की विशेषता को बिश्नोई लोकगीतों में देखा जा सकता है। इस विशेषता की अभिव्यक्ति का प्रमुख कारण पंथ के संस्थापक गुरु जाम्भोजी की विचारधारा ही है। वैसे तो यह विशेषता सभी प्रकार के बिश्नोई लोकगीतों में अभिव्यक्त हुई है, पर जाम्भोजी की विचारधारा के अनुकूल होने के कारण यह जाम्भोजी एवं मेलों से सम्बन्धित गीतों में अधिक चित्रित हुई है।

सहिष्णुता एवं उदारता का भाव भी भारतीय संस्कृति की एक विशेषता रही है। इसी विशेषता के कारण ही भारतवर्ष में लोग सभी धर्मों का सम्मान करते हैं। गुरु जाम्भोजी ने भी सबदवाणी में धार्मिक सहिष्णुता एवं उदारता का समर्थन किया है। उन्होंने किसी भी धर्म की बुराई नहीं की है। वे तो धर्म के नाम पर प्रचलित पाखण्डों एवं आडम्बरों का विरोध करते रहे हैं[10] और उन्होंने मोक्ष प्राप्ति के लिए सभी मार्गों का समर्थन किया है।

भाग परापति करमां रेखा, दरगै जुंवला जुंवला माधू।[11]

यही विशेषता बिश्नोई लोकगीतों में अभिव्यक्त हुई है।

बीरो मेरो तो ल्यावै चूंदड़ी, सब देवता की फोटो होवै।
मैं ऐसी ल्याऊं चूंदड़ी जी॥[12]
मेरी चूंदड़ी में राम-लिछमण अर सीताजी भी साथ होवै।
मेरी चूंदड़ी में हड़मान जी नै, सारी दुनिया परणाम करै।
मैं ऐसी ल्याऊं चूंदड़ी जी॥[13]

इस गीत में जो आदर एवं श्रद्धा बिश्नोई पंथ प्रवर्तक व धामों के प्रति व्यक्त की है, वही आदर का भाव अन्य धर्मों एवं देवताओं के प्रति व्यक्त किया गया है।

आध्यात्मिकता की भावना भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता एवं पहचान है। इसीलिए हमारे देश के सभी धर्मों की मूल प्रेरणा आध्यात्मिक भावना है। यही भावना बिश्नोई लोकगीतों में अभिव्यक्त हुई है। इसी भावना के कारण एक बिश्नोई लोकगीत में जीव ने धर्म को अपना साथी माना है। धर्म की राह पर चलकर ही मनुष्य अच्छे कर्म कर सकता है और अच्छे कर्म ही मोक्ष प्राप्ति में सहायक होते हैं।

सुआ कुण तेरो माय रै बाप, कुण तेरो संगा साथी?
सुआ-धरती मेरी माय रै बाप, धरम मेरो संग साथी।[14]

आध्यात्मिक भावना के कारण ही मनुष्य ईश्वर को स्मरण करता है और ईश्वर स्मरण ही मोक्ष प्राप्ति में सहायक होता है। इसीलिए एक गीत में कहा गया है-

हंसा रे लेल्यो-लेल्यो जाम्भेश्वर गोनाम, कोई जम्भेश्वर गोनाम,
भजना गी बांधों गांठड़ी।[15]

गुरु जाम्भोजी ने भी 'विसन-विसन तूं भण रे प्राणी' पर जोर देकर विष्णु-स्मरण पर बल दिया है।

इस तरह बिश्नोई समाज के धार्मिक अनुष्ठानों के लोकगीतों में भारतीय संस्कृति की अनेक विशेषताएं चित्रित हुई हैं। इन विशेषताओं के चित्रण से ही एक ओर बिश्नोई लोकगीत भारतीय संस्कृति के प्रतिबिम्ब बने हुए हैं तो दूसरी ओर से अपना स्वतंत्र अस्तित्व भी बताये हुए हैं।

संदर्भ:

1. डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, जाम्भोजी की सबदवाणी (मूल और टीका), 12-1 से 3
2. भगवद् गीता, अध्याय 5-3
3. वही, अध्याय 5-12
4. डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, जाम्भोजी की सबदवाणी (मूल और टीका), 84-9
5. वही, 75-5
6. वही, 11-32
7. लेखक का निजी संग्रह, जाम्भोजी एवं मेलों के गीत, सं. 9
8. वही, सं. 14
9. डॉ. बनवारी लाल सहू, बिश्नोई लोकगीत, पृ. 114
10. डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, जाम्भोजी की सबदवाणी (मूल और टीका), 95-4, 97-3
11. वही, 86-31
12. लेखक का निजी संग्रह, जाम्भोजी एवं मेलों के गीत, सं. 4
13. वही, सं. 4
14. वही, सं. 8
15. वही, सं. 9

-डॉ. बनवारी लाल सहू
विभागाध्यक्ष (हिन्दी) से.नि.
एन.एम.पी.जी. कॉलेज, हनुमानगढ़ टाउन (राज.)
मो.: 9414875029

मधुर वाणी

जिस प्रकार सफलता के लिए बहुत से गुण अनिवार्य होते हैं, उनमें वाणी को एक प्रमुख गुण माना जा सकता है। इसीलिए हमारे उन्नतीस नियमों मे भी गुरु महाराज ने कहा है कि वाणी हमेशा छानकर ही बोले।

वाणी सफलता का वह प्रभावशाली शस्त्र है, जो दूसरे सारे शस्त्रों पर भारी है। मीठी व सुहानी वाणी बिगड़े काम बना देती है। वाणी-व्यवहार की चतुराई से बड़ी-बड़ी समस्याएं, जटिल गुत्थियां इंसान देखते ही देखते सुलझा लेता है। लेकिन ऐसा अकसर देखने में आता है कि बेढंगी बातचीत, कठोर वाणी से समस्याएं उलझ जाती हैं और कई बार व्यक्ति का बना-बनाया काम बिगड़ जाता है। इसलिए कहा गया है कि ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोय। ओरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय॥ अर्थात् मनुष्य को ऐसी वाणी बोलनी चाहिए, जिससे मन में भरे राग, द्वेष मिट जाएं। जो दूसरों को शीतलता प्रदान करे और खुद को भी शीतलता दे।

बातचीत करना भी एक कला है। आज के परिवेश में यदि हम उदाहरण एकत्रित करें तो ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है, जहां प्रेमपूर्वक बातों से बड़े भारी मसले चुटकियों में हल हो गए और बेढंगी तथा बे-सिर पैर की बातों से झगड़े बढ़ गए। यदि हम इतिहास के पन्ने पलटें और महाभारत के कारणों पर नजर डालें तो इस विश्वयुद्ध के पीछे कुवाणी ही नजर आएगी। याद करें द्रौपदी के शब्द -'अंधे का पुत्र अंधा।' इस एक बिगड़े बोल ने महाभारत जैसे महायुद्ध को जन्म दे दिया। दिन प्रतिदिन के कामों में, व्यवसाय में, घर परिवार, रिश्तेदारों में, समाज में वाणी का बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ता है आइए एक कहानी से समझते हैं।

एक महिला शहद बेचने का काम करती थी। शहद तो वह बेचती ही थी, उसकी वाणी भी शहद के जैसी ही मीठी थी। उसकी दुकान पर खरीददारों की भीड़ लगी रहती थी। एक ओछी प्रवृत्ति वाले व्यक्ति ने देखा कि शहद बेचने से एक महिला इतना लाभ कमा रही है, तो उसने भी उस दुकान के नजदीक एक दुकान में शहद बेचना शुरू कर दिया। आदमी का स्वभाव कठोर और कर्कश था। एक दिन एक ग्राहक ने सहज में ही उससे पूछ लिया कि शहद मिलावटी तो नहीं। उसने भड़ककर कहा कि जो स्वयं नकली होता है, वही दूसरे के सामान को नकली बताता है। ग्राहक उसकी कड़क आवाज से नाराज होकर लौट गया। वहीं आदमी फिर पास की महिला की दुकान पर पहुंचा और वही सवाल महिला से पूछा कि बहन जी शहद नकली तो नहीं है ना। महिला ने मुस्कुराते हुए कहा कि जब उसके पास आप जैसे ईमानदार ओर असली लोग शहद खरीदने आते हैं, तो वह नकली शहद क्यों बेचेंगी? ग्राहक मुस्कुरा उठा और जितना शहद लेना था उससे दोगुना लेकर गया।

इस कहानी से हम समझ सकते हैं कि दो मीठे बोल बोलने से हम किसी का भी मन बदल सकते हैं इससे हमारे व्यक्तित्व पर कितना गहरा प्रभाव पड़ता है। जब हम अपने अहंकार, क्रोध और आवेश पर नियंत्रण रखते हुए मधुर वाणी का प्रयोग करते हैं, तो न केवल अपने आप को निखारते हैं, बल्कि दूसरों के जीवन में भी सकारात्मक प्रभाव डालते हैं। दूसरी ओर, कटु शब्दों का प्रयोग हमारी अपनी वाणी को खराब करता है और सामने वाले व्यक्ति को भी कष्ट पहुंचाता है और हम स्वयं को कमजोर बनाते हैं।

जहां वाणी में तिक्तता, कड़वाहट या रूखापन आया नहीं कि कोई न कोई बात बिगड़ जाती है। अकसर देखने में आता है कि अपने घर मेहमान आए व्यक्ति के लिए यदि आप स्वागत के दो मीठे शब्द कह देते हैं, तो आपके द्वारा की गई साधारण अतिथि सेवा भी उसे बहुत अच्छी लगेगी, किंतु यदि उसके खान-पान तथा रहन-सहन की समुचित व्यवस्था करने पर भी आप कुछ कड़वी कठोर बात कर जाते हैं तो सारा करा-धरा व्यर्थ हो जाता है और सत्कार के स्थान पर आप उसके द्वेष के पात्र बन जाते हैं। तो हम देखते हैं कि सिर्फ मीठे दो बोल कितना असर कर सकते हैं।

वर्तमान की स्थिति बहुत गंभीर है। घर, परिवार, समाज में झगड़े, तलाक, बंटवारे सभी का मुख्य कारण वाणी ही है। तो संयम से थोड़ा सा भाषा में सुधार लाकर हम बहुत कुछ बदल सकते हैं। मेरी तरफ से अमर ज्योति परिवार को अंग्रेजी नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएं। सभी अपनी वाणी में मधुरता लाएं और अपने आसपास खुशियां बांटे, स्वस्थ रहें, मस्त रहें।

-अश्वनी साँवक
सुपुत्र श्री राजपाल साँवक
गांव-11 टी.के. (ढाणी), रायसिंहनगर (राज.)
मो.: 8890545477

जीवन और अनुशासन

अनुशासन जीवन के हर पड़ाव पर अति आवश्यक है। अनुशासन से जीवन सम्यक्, शिष्टाचारी और सुव्यवस्थित बनता है। विद्यालयों में अनुशासन की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी खेल और सेना में उसकी आवश्यकता है। आप अनुशासित बन कर किसी भी लक्ष्य को हासिल कर सकते हैं। सेना की थोड़ी-सी अनुशासनहीनता से राष्ट्र परतंत्र हो सकता है। देश को किसी भी समय बड़े से बड़ा नुकसान हो सकता है। अनुशासन से जीवन के अनेक पहलू सीधे-सीधे जुड़े हुए हैं। खिलाड़ी की अनुशासनहीनता से खेल में पराजय अवश्यम्भावी है। हम जरा से अनुशासन से हटे उसी समय लक्ष्य की दिशा का स्वरूप बदल जाएगा, परिणामस्वरूप हमें असफलता का मुँह देखना पड़ेगा। विद्यालयों में प्राय: यह देखने को आता है कि अनुशासनहीनता के कारण विद्यार्थी उचित दिशा से भ्रमित होकर गलत दिशा की ओर रूख करते हैं। ऐसा करना सीधे-सीधे विद्यार्थी के अहित में जाता है। अनुशासनहीनता से छात्र अपने मानसिक असंतोष को अच्छृंखल व्यवहार के द्वारा प्रदर्शित करते हैं।

अनुशासनहीनता अनेक दुराचारों को जन्म देती है। इस समय अनेक अप्रत्याशित घटनाएं उभर कर सामने आती हैं। जैसे- विद्यालय भवन की तोड़-फोड़, सहपाठियों से अपशब्द का प्रयोग करना, इस अवसर पर विद्यार्थी का मन एक शैतान की तरह हो जाता है, परिणामस्वरूप छात्र शिक्षा ग्रहण करने से कुछ समय के लिए पथभ्रष्ट हो जाता है। अनुशासनहीनता अनुशासन को प्रभावित करती है, कॉलेज या विद्यालय में लड़ाई- झगड़ा करना, अध्यापकों से दुर्व्यवहार करना। गुरु जी जो शिक्षा के पावन मन्दिर हैं, पग-पग पर जिनसे सहायता की आवश्यकता होती है उनको भी बहुधा अनुशासनहीनता के कारण अपमानित होना पड़ता है। लड़ाई-झगड़ा करने से कॉलेज का माहौल बदल जाता है, असुरक्षा की भावना पैदा हो जाती है और मूलत: शिक्षा ग्रहण करने को आघात पहुँचता है। कुछ शरारती तत्व भी कॉलज में हुड़दंग मचा कर शिक्षा को प्रभावित करते हैं। कुछ ऐसी नाजायज मांगें रखते हैं जिनको कॉलेज प्रशासन द्वारा पूर्ण करना असंभव होता है। जो हठधर्मी के कारण प्रारम्भ में हड़ताल और फिर एक आंदोलन का रूप ले लेती है। इस अवसर पर कुछ अनुशासित बच्चे/विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने से वंचित रह जाते हैं। विद्यालय/कॉलेज औपचारिक शिक्षा ग्रहण करने का प्रमुख साधन हैं, यह भावना समाप्त हो जाएगी।

विद्यालयों का सुचारू रूप से संचालन अनुशासन पर ही निर्भर करता है। 'सुचारू रूप से संचालन' का तात्पर्य विद्यालय में ऐसी स्थिति बनाए रखना है, जिससे शिक्षा का शिक्षणेतर अनेकानेक कार्य-कलाप सुचारू रूप से चलते रहें। इसके लिए अनेक कड़ियां, जैसे- व्यवस्थापकों, अध्यापकों तथा विद्यार्थियों- सभी के सहयोग की आवश्यकता है। जेम्स रॉस ने लिखा है कि बहुत अच्छी व्यवस्था बुरा अनुशासन भी हो सकती है, परन्तु सच्चा अनुशासन सर्वदा अपने साथ व्यवस्था बनाए रखना है। मुख्यत: प्रधान-अध्यापकों, की जो कि प्रशासनिक दृष्टि से विद्यालय की व्यवस्था के लिए उत्तरदायी होता है, प्रशासनिक क्षमता, योग्यता, कार्यदक्षता तथा व्यवहार कुशलता पर ही विद्यालय के अनुशासन की प्राचीन खड़ी रह सकती है। वह आंतरिक और बाह्य संघर्ष से विरल रह कर ही प्रशासनिक क्षमता और कुशलता उत्पन्न कर सकता है। प्रशासनिक व्यवस्था शिक्षा-अर्जन का एक महत्वपूर्ण अंग है। प्रशासनिक कड़ी पर बहुत-कुछ निर्भर करता है। प्रशासनिक व्यवस्था ठीक होगी तो विद्यालय ठीक समय पर लगेगा क्योंकि इस स्थिति में अनुशासन का अहम योगदान होता है।

प्रार्थना में सभी विद्यार्थी और अध्यापक उपस्थित रहेंगे, अनुशासन सभी के लिए अनिवार्य है चाहे शिक्षक हों या विद्यार्थी व स्कूल के अन्य कर्मचारी। सभी के सामूहिक सहयोग से ही शिक्षा को बढ़ावा मिलेगा। सभी विषयों के लिए पीरियड का निर्धारण होगा। शिक्षक भी समय पर अपनी कक्षाओं को लेंगे। विद्यार्थी भी घंटी बजते ही शीघ्रता से अपनी कक्षाओं में जाएंगे। इसी दौरान अध्यापक भी पीरियड अनुसार विषयों के अनुरूप कक्षाओं में अध्यापक कार्य करेंगे। इधर-उधर घूमता हुआ न विद्यार्थी मिलेगा, न कक्षाओं के बाहर अध्यापक। विद्यालय में 'पिन ड्रॉप साइलेंस' (पूर्ण शांति) होगी। पढ़ने और पढ़ाने वाले दोनों को आनन्द आएगा। यह आनन्द तभी प्राप्त होगा जब विद्यालय में अनुशासन होगा।

विद्यालय की व्यवस्था का पूर्ण दायित्व अध्यापकों के कन्धों पर होता है। अध्यापक राष्ट्र की संस्कृत रूपी उद्यान का चतुर माली है। मुख्यतया हम कह सकत हैं कि विद्यार्थी के जीवन को अध्यापक मूर्त रूप देता है। वह छात्र के संस्कार की जड़ों में खाद देता है। अपने श्रम से सींच-सींच कर उन्हें महाप्राण बनाता है। अध्यापक को भी कदम-कदम पर पूर्णतया सजग रहना पड़ेगा।

इसके विपरित यदि अध्यापक स्वयं संस्कार रहित रहें, आचरणहीनता प्रदर्शित करें, अमर्यादित रहें, लोभ -लालचवश विद्यार्थियों से दुर्व्यवहार करें, अपने स्वार्थवश विद्यार्थियों से निजी कार्य करवाएं, बच्चों/ विद्यार्थियों के बारे में आलोचनात्मक शब्द कहें, तो व्यवस्था के प्रति विद्रोह उत्पन्न होगा, विद्यालय की गतिविधियाँ अशान्त रहेंगी, व्यवस्था में विघ्न पैदा होगा, पढ़ाई-लिखाई दिखावा मात्र होगी, मेधावी बच्चे/ विद्यार्थी शिक्षा से वंचित रह जाएंगे, ट्यूशनों की हुंडी भुनाई जाएगी, विद्यालय में अनुशासन नाम की शृंखला छिन्न-भिन्न हो जाएगी। परीक्षा में पक्षपात पूर्ण अंक प्रदान किए जाएंगे। शिक्षा के व्यवसायीकरण को बढ़ावा मिलेगा। शिक्षा ग्रहण करने की प्रक्रिया को ठेस पहुँचेगी, ये सब गतिविधियाँ अपना वास्तविक प्रारूप खो बैठेंगी। ऊपर वर्णित घटनाक्रमों में स्पष्ट रूप से अध्यापक की अनुशासनहीनता झलकती है। अध्यापक को भी एक विद्यार्थी की तरह अनुशासित बनना पड़ेगा। अध्यापक को विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास का ध्यान रखना पड़ेगा। विद्यार्थियों के प्रतिदिन की क्रियाओं द्वारा विस्तार से सोचना होगा। इसके अतिरिक्त अन्य और भी अनेक पहलू हैं जो अनुशासन-हीनता के कारण विद्यार्थी की शिक्षा ग्रहण करने की पद्धति में विघ्न डालते हैं। अनुशासन का विस्तृत दायरा है। विद्यार्थी और अध्यापक के साथ-साथ आम जनता को भी अनुशासन का पालन करना पड़ेगा। बस स्टैण्ड पर, रेलवे स्टेशन पर, राशन की सरकारी दुकान व प्राईवेट प्रतिष्ठान पर आपको कतार में खड़े होकर अनुशासनात्मक ढंग से कार्यशैली का परिचय देना पड़ेगा, अन्यथा अव्यवस्था फैल जाएगी। कतार के क्रम को तोड़ने पर लोगों में नाराजगी उत्पन्न हो जाती है। आम जनता को भी विद्यार्थी की तरह अनुशासित रहना पड़ेगा। जैसे- प्रतिदिन विद्यार्थी प्रार्थना के दौरान एक अनुशासनात्मक नमूना पेश करते हैं, उसी तरह प्रत्येक जन-मानस को विद्यार्थी बनना पड़ेगा। बच्चे प्रार्थना के दौरान कतार बना कर बैठते हैं। तत्पश्चात् बैठ कर किसी विषय के बारे वक्ता को सुनते हैं। पंक्तियों में बैठे विद्यार्थी अति सुन्दर लगते हैं। प्रार्थना के पश्चात् वे बड़े अनुशासनात्मक ढंग से कतारें बना कर अपनी-अपनी कक्षा में जाते हैं। यह विद्यालय में अनुशासन का अति उत्तम उदाहरण है।

विद्यालय में अनुशासन की तीसरी व मुख्य कड़ी है- विद्यार्थी। सदाचार व स्वावलम्बन आदर्श विद्यार्थी के अनिवार्य गुण हैं। यदि उसमें सदाचार नहीं; तो वह अपना विद्यार्थी जीवन तो क्या, शेष जीवन भी सुन्दर और सफल नहीं बना सकता। दूसरे उसमें स्वावलम्बन का भाव कूट-कूट कर भरा होना चाहिए। अपना काम स्वयं करने की आदत यदि विद्यार्थी जीवन में नहीं पड़ी, तो भविष्य में पड़नी कठिन है। परावलम्बी मनुष्य को कितनी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है, यह दिन-प्रतिदिन के व्यवहार में हम देखते हैं। अत: एक आदर्श विद्यार्थी को स्वावलम्बी बनना चाहिए। संस्कृत साहित्य में आदर्श विद्यार्थी के पाँच लक्षण बनाए गए हैं-

काक चेष्ट बको-ध्यानं, श्वान निद्रा तथैव च।
अल्पाहारी, गृहत्यागी, विद्यार्थी पंच-लक्षणम्॥

विद्या प्राप्ति के लिए कौए जैसी सतर्कता चाहिए, एकाग्रचितता बगले के समान होनी चाहिए, जरा सी आहट पाकर टूट जाने वाली कुत्ते जैसी निद्रा होनी चाहिए; कम भोजन करना चाहिए तथा घर के बन्धन से दूर रहना चाहिए। ये पाँचों लक्षण अनुशासन प्रक्रिया का एक भाग हैं। विद्यार्थी को बड़ा ही सचेत रह कर काम करना पड़ेगा। जब-जब विद्यार्थी अनुशासन से पथभ्रष्ट हुआ है तब-तब अनेक दुष्कृतियाँ उसको गलत रास्ते की ओर ले जाती हैं। इसके अनेक उदाहरण हैं- विद्यार्थी सहपाठियों की चुगली करके, अनकी वस्तुएँ चुरा कर, उनसे अपशब्द कह कर, मारपीट करके, गुरुजनों की आज्ञा का उल्लंघन करके बिना कारण पीरियड छोड़ करके, गृहकार्यों को रूचिपूर्ण न करके, गुरुजनों के पीछे उनकी हँसी उड़ा कर, उनसे कुतर्क करके तथा परीक्षा में नकल करके विद्यालय के अनुशासन को भंग कर सकता है। अनुशासन आचरण के आन्तरिक स्त्रोत को स्पर्श करता है, विद्यार्थी के आवेगों व शक्यितों को विधानों के अधीन रख कर उच्छृंखलता को व्यवस्थित करता है। आन्तरिक दृढ़ता आ जाने पर विद्यार्थी

का बाह्य आचरण भी स्वत: शुद्ध हो जाएगा। अन्तत: विद्यार्थी अनुशासन-प्रेमी बन जाएगा।

पाँच वर्ष से पच्चीस वर्ष तक की आयु विद्या-अध्ययन का काल मानी जाती है। इसमें विद्यार्थी पर न घर-बार का बोझ होता है न सामाजिक और आर्थिक चिन्ता। वह मानसिक रूप से स्वतंत्र रह कर अपना शारीरिक बौद्धिक व मानसिक विकास करता है। यह कार्य तभी सम्भव है, जब वह अनुशासन में रहे। यह शासन चाहे गुरुजनों का हो, चाहे माता-पिता का हो। इसमें उससे शील, संयम, ज्ञान-पिपासा तथा नम्रता की वृत्ति जागृत होगी।

आज स्थिति बदल गई है। दुर्भाग्य से हमारे राजनीतिक नेताओं ने इस निश्चिन्त विद्यार्थी वर्ग को अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए राजनीति में घसीट कर अनुशासनहीनता का मार्ग दिखा दिया है। स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गांधी ने, 1947 की समग्र क्रान्ति के प्रणेता श्री जयप्रकाश नारायण ने तथा आपातकाल के विरोधी आन्दोलन के जन-नेताओं ने शासन के विरुद्ध विद्यार्थी वर्ग का खुलकर प्रयोग किया। 'रोपे पेड़ बबूल के, आम कहाँ से होय।' स्वतंत्रता के पश्चात् 1975 के मध्य तक विद्यार्थी वर्ग की अनुशासनहीनता बेकाबू हो गई। विरोधी आन्दोलनों के परिणामस्वरूप मई 1977 के पश्चात् आज तक यह समस्या सुरसा के मुँह की भाँति फैलती जा रही है। लगता है यह अनुशासनहीनता न केवल अध्ययन संस्थाओं को ही, अपितु सम्पूर्ण समाज को प्रभावित करेगी। विपक्षी वर्ग राजकीय पक्ष को नीचा दिखाने के लिए विद्यार्थी वर्ग का उपयोग करता है। परिणामस्वरूप नारेबाजी, भवन-विध्वंस, गुरुजनों के प्रति अनास्था का जन्म होता है। विद्यालय पढ़ाई केन्द्र न रह कर राजनीति के अड्डे बन जाते हैं, जहाँ हड़ताल और विध्वंस को प्रोत्साहन मिलता है।

विद्यालय की सुचारू व्यवस्था में माता-पिता का दायित्व भी कम नहीं। विद्यार्थी को नियमित और समय पर स्वच्छ गणवेश और स्वस्थ मन से विद्यालय भेजना माता-पिता का कर्तव्य है। विद्यार्थी के आचरण पर तीखी नजर रखना, विद्यार्थी में अनुशासन की भावना जागृत करेगा। अनुशासन विद्यार्थी के आधार को बड़ा सुदृढ़ बना देता है। जिस प्रकार भवन निर्माण में मकान की नींव को मजबूत किया जाता है। अनुशासन एक बीज की तरह है जो अंकुरित होकर धीरे-धीरे बहुत बड़े पेड़ का आकार ले लेता है ठीक इसी तरह अनुशासन जीवन के विभिन्न आयामों में अपनी गहरी छाप छोड़ता है। आप किसी भी सार्वजनिक क्षेत्र का उदाहरण ले लीजिए। शिक्षा के क्षेत्र में आगे चल कर आप अनुशासन को बढ़ावा देंगे क्योंकि अनुशासन आप की रग-रग में समा चुका है। मिलिट्री क्षेत्र में आप एक उच्च अधिकारी बने हैं तो स्वत: आपके अधीनस्थ कर्मचारियों में अनुशासन की अनुपम झांकी देखने को मिलेगी।

वस्तुत: आदर्श विद्यार्थी को विनम्र, जिज्ञासु सेवा भाव से युक्त, स्ंयमी, परिश्रमी और मिलनसार होना चाहिए। जीवन की सादगी और विचारों की महानता में उसका विश्वास होना चाहिए। विद्यालयों में विद्यार्थी ठीक ढ़ंग से अध्ययन कर पाएं, एकाग्रचित ही शिक्षा अर्जन कर सकें उनमें संस्कार और सुरुचि के अंकुर प्रस्फुटित होकर पुष्पित और पल्लवित हो सकें तथा उनके शरीर और आत्मा का सौन्दर्य विकसित हो सके, इसके लिए विद्यालयों में अनुशासन की नितान्त आवश्यकता है। प्रकृति स्वयमपि अनुशासनबद्ध है। सूर्य चन्द्र का उदय और अस्त षड्ऋतु-परिवर्तन नियमबद्ध है। प्रकृति का अनुशासन संसार को जीवन दे रहा है। यदि प्रकृति अनुशासनहीनता प्रदर्शित करे, तो प्रलय हो जाए। उसी प्रकार ज्ञान के ज्योति-पुंज, संस्कृति और सभ्यता के स्त्रोत में विद्यालय अनुशासनहीन हो जाएंगे, तो राष्ट्र का विकास अवरुद्ध हो जाएगा, भविष्य अंधकारमय हो जाएगा और देश विनाश के गर्त में गिर पड़ेगा।

अत: अनुशासन जीवन के हर पहलू में अनिवार्य है। अनुशासन से राष्ट्र प्रगतिशील व विकसित बनता है। निश्चित तौर से हम कह सकते हैं कि अनुशासन राष्ट्र का सशक्त एवम् मजबूत आधार है।

'अमर ज्योति पत्रिका सभी लेखकों एवम् सुधी पाठकों को नववर्ष-2026 के उपलक्ष्य में ढेरों शुभकामनाएं।

-डॉ. सत्यपाल शर्मा एडवोकेट
उपाध्यक्ष, अखिल भारतीय साहित्य परिषद्, हिसार
पूर्व अध्यक्ष, अणुव्रत समिति, हिसार

संत कवि केसोजी गोदारा (सन् 1573-1679)

संत कवि केसोजी गोदारा (सन् 1573-1679) गांव माढ़िया (नोखा) के रहने वाले थे। आप युवावस्था में ही साधु बन गये थे और महात्मा वील्होजी को अपना गुरु बनाया। वील्होजी के सात प्रमुख शिष्यों में केसोजी गोदारा और सुरजन जी पूनियां भी थे। सुरजन जी ने आपको कथा काव्य का विशेष कवि माना है-

'केसो कथा अरथ नै करमूं, तप सूजो आलमूं तांति'

हीरानन्द के 'हिंडोलणों' जाम्भैजी रै भक्ता री भक्तमाल, वील्होजी शिष्य परम्परा और अन्य बिश्नोई कवियों के साहित्य में भी कवि केसोजी का नाम शामिल है। संत कवि साहबराम जी राहड़ ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'जम्भसार' में लिखा है कि संत कवि केसोजी अपने गुरु धाम 'रामड़ावास' में विराजमान थे, तब वहां जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिंह आये। उन्होंने केसोजी से 'वर्षा' करवाने का अनुरोध किया। कवि केसोजी ने गुरु जाम्भोजी महाराज का स्मरण करके बेमौसमी 'वर्षा' करवाई। वर्षा करवाने से महाराजा बड़े खुश हुए। उन्होंने इन्हें पांच बीघा जमीन 'डोली' में दी और सात गुनाह माफ किये। इस प्रकार अनेक चमत्कार राव, राजाओं, खान और सुलताना को दिखाए।

आपने अपने गुरु द्वारा शुरू किये गये (दो महत्वपूर्ण कार्य- एक गुरु जाम्भोजी की विभिन्न साथरियां, पवित्र स्थानों की सुव्यवस्था, दूसरा बिश्नोई पंथ पंचायत का गठन सम्बन्धी) कार्यों को विधिवत जारी रखा था। आपका एक और महत्वपूर्ण कार्य जांभाणी साहित्य का निर्माण करना रहा है। अब यह कार्य जाम्भाणी साहित्य अकेडमी उन्हीं की परम्परा को बखूबी से निभा रही है।

आपकी प्रसिद्ध रचनाएं- साखियां, हरजस, डिंगल गीत, कवित्त, दोहा, सवैया, चन्द्रायण, स्तुति अवतार की, दस अवतार का छंद, कथा बाललीला, कथा ऊदै अतली की, कथा सैंसे भक्त की, कथा मेड़ते की, कथा चित्तौड़ की, पहलाद चरित्र, कथा भींव दुसासण की, कथा सुरगा रोहिणी, कथा इसकंदर की, कथा जती तलाब की, कथा विगतावली, कथा लोदा पांगल की, कथा बह सोवनी, कथा भ्रख लेखा आदि प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त आपकी खड़ाणे बलिदान की साखियां, बुढ़ापा, सूम, त्रिया लखण, अमली सोफी रा दोहा, साम्यजी रा दोहा (सोरठिया) आदि आपकी विशेष रचनाएं हैं। आपने पौराणिक, ऐतिहासिक और लौकिक प्रसंगों के आधार पर अनेक कथा काव्यों की रचनाएं की हैं। आपकी रचनाओं पर गुरु जाम्भोजी की सबदवाणी का प्रभाव स्पष्ट नजर आता है। मुक्तक रचनाओं में हरजस विशेष महत्व रखते हैं जिनमें आत्म निवेदन आत्मानुभूति, ज्ञान, विचार और लौकिक अनुभव की झलक है।

हरजस

आरती तेरी हो, प्रभु चिन्ता मेटो मेरी हो।
वेदर लिया ब्रहां वणां, प्रभु पास्य पुकारे।
रतन चवदै आंणियां, मध कीचक मारे हो॥
हरि हिरणाकस मारीयो, नर नषा बिडारे।
लंक विभीषण दान दे, पहलाद उबारे हो॥
बुधर (युधिष्ठर) भगति पधारिया, दर जो धन लाजै।
विदुर विसन पिछाणियों, करि नेह निवाजै हो॥
राज निवाजै गरीब कूं, हरि सेवग थारी।
जन केसो की विनती, प्रभु पार उतारी हो॥

गुरु जी मैं आपकी आरती करता हूं, हे प्रभु आप मेरी चिन्ता मेट दो। हे प्रभु! जब ब्रह्मा के वेद शंखासुर ने चुराये तो उन्होंने आपके सामने ही विनय की थी। आपने समुद्र में से चौदह रत्न निकाले थे और आपने ही मध कीचक को मारा था। आपने ही हिरणाकश्यप को नखों से चीर कर प्रहलाद को बचाया था और आपने ही विभिषण को लंका प्रदान की थी। आप बुधर (युधिष्ठर) के कार्य हेतू हस्तिनापुर गये थे और दुर्योधन को शर्मिन्दा किया था। विदुर ने आपको पहचान कर ही आपसे प्रेम किया था।

कवि केसोजी कहते हैं कि आप गरीबों की सहायता करते हो और मैं भी आपका गरीब सेवक हूँ, इसलिए हे प्रभु! हमें भी पार उतारो।

दिन थकै पंथ देखि ले, आप मिलै अंधयार।
कहि केसो काया थकी, करि कोई उपकार॥

अर्थात् हे प्राणी! जब सूर्य का प्रकाश है तब तक रास्ता देख ले। सूर्य अस्त होने के बाद अन्धेरा हो जायेगा। केसोजी कहते हैं- जब तक यह शरीर है, कोई उपकार करो।

-मनोहर लाल गोदारा
पूर्व सम्पादक अमर जयोति,
ग्राम सदलपुर, जिला हिसार
मो.: 9416131047

वैचारिक भावों से उत्पन्न वातावरण ही स्वर्ग व नर्क

अधिकांशत: मनुष्य अपने ही विचारों को सही व उचित मानकर उन्हीं को अपनाने का प्रयास करता है। कभी-कभी इस तरह का विश्वास सत्यता से दूर कर देता है। अपने आप में भ्रमित व्यक्ति अपनी ईश्वरीय आस्था व अन्य विचारों के विपरीत कुछ भी सुनना- समझना था। सत्य-असत्यता में विचार नहीं करना चाहता। जिस कारण अपने आसपास के वातावरण को सुखी बनाने में असमर्थ हो रहा है। हमारा विश्वास है कि मनुष्य के वैचारिक भावों से उत्पन्न होने वाला वातावरण ही स्वर्ग व नर्क है। अनेक बुद्धिजीवी महापुरुषों ने अपने समय के अनुकूल विचारों को जन्म दिया, ताकि मानव समाज सुखमय जीवन व्यतीत कर सके। आज मानव समाज मूल आदर्शों से विचलित होकर एक-दूसरे को स्वयं के आदर्शों पर चलने-चलाने का प्रयास कर रहा है, जिससे कभी-कभी हानि की संभावना बन जाती है। महापुरुष तो अदृश्य शक्ति को प्राप्त करके मोक्ष को प्राप्त हो गये। समस्त सृष्टि को संचालित करने वाली अदृश्य शक्ति को ध्यान में रखकर महापुरुषों ने मानव समाज को सही मार्ग पर चलने की दिशा प्रदान की। प्रत्येक व्यक्ति अपनी आस्था के अनुरूप पूजा पाठ करता है। अन्तत: सभी शक्तियां निर्गुण परमात्मा की ओर ले जाती है। मनुष्य के अपने मन वचन कर्म से मिथ्या विवादों का त्याग करके सत्कर्मों के साथ अपने कर्तव्यों का निर्वाह करना चाहिए। समयबद्ध रहकर उसकी स्तुति करनी चाहिए, जिससे आत्म शांति की प्राप्ति हो सके और उस परम शक्ति का सान्निध्य प्राप्त हो सके।

सम्भवत: पारब्रह्म और पारब्रह्म द्वारा प्रेरित की गई जीवात्मा रूपी शक्ति का आभार व्यक्त करने में किंचित मात्र भी संकोच न करें। क्योंकि वह मानव समाज को सुखमय बनाने हेतु किसी न किसी रूप में, किसी को माध्यम बनाती है और नये संचार के साथ प्रेरित करती है।

पर्यावरण प्रहरी और बिश्नोई समाज के प्रवर्तक श्री गुरु जम्भेश्वर जी के सिद्धान्तों के प्रति आस्थावान, मानवतावादी, धर्मनिष्ठ, समाजसेवी और न्यायसंगत व्यक्तित्व वाली पवित्रात्मा को बोध प्रदान करके जनमानस के उत्थान हेतु जिस जीवात्मा को अग्रसित किया। वह आदरणीय चौ. भजन लाल बिश्नोई जी (पूर्व मुख्यमंत्री हरियाणा) के नाम से सुविख्यात हुई। जिन्होंने अपने अथक प्रयासों द्वारा निष्क्रिय होती जा रही सामाजिक व्यवस्था को नई चेतना के साथ ऊर्जावान बनाया। निष्ठापूर्वक आस्थानुसार महत्वपूर्ण दायित्वों का निर्वाह किया। पूजनीय व प्रशंसा के पात्र स्व. चौ. भजनलाल बिश्नोई जी की पवित्रात्मा को कोटि-कोटि नमन व धन्यवाद। जिनके व्यक्तित्व की महिमा युगों-युगों तक समाज में जाग्रत रहेगी। जिनके नेतृत्व में क्षेत्रानुसार सामाजिक व प्राकृतिक वातावरण को स्वर्गमय बनाने जैसे मानवता उत्थान को अभूतपूर्व कार्य हुए। मानवता युक्त सामाजिक कार्यों में लिप्त उच्च विचारों वाले सभी बुद्धिजीवियों को कोटि-कोटि नमन व धन्यवाद।

-हरिओम बिश्नोई (हरिभक्त)
नई बस्ती, गुरुद्वारा रोड, बिजनौर
मो. 9917610327

कोरोना काल में हिदायतें और बिश्नोई धर्मपंथ का धर्म नियम

'करै रसोई हाथ सूं आन सूं पला न लावै' में एकदम समानता है। दोनों शत प्रतिशत एक समान हैं।

जांभाणी साहित्य में उल्लेख है कि- **सतगुरु सतपंथ चालीया खरतर खंडाधार।**

अर्थात् गुरु जम्भेश्वर भगवान ने एक ऐसा बिश्नोई धर्मपंथ चलाया जिस पर चलना तलवार की धार पर चलने के समान है क्योंकि इस धर्मपंथ के धर्म नियमों का पालन करना बड़ा ही कठिन कार्य है और इस धर्मपंथ पर चलना एक प्रकार का तप है।

ठीक उसी तरह ही कोरोना काल की सरकारी हिदायतों का पालन करना भी बड़ा ही कठिन कार्य था और तलवार की धार पर चलने के समान ही था। माना कि अब कोरोना चला गया है और उन सरकारी हिदायतों का पालन करना जरूरी भी नहीं रहा है लेकिन फिर भी किसी भी तरह के संक्रमणों से बचने के लिए, बीमारियों से बचने के लिए और शुद्धता, सात्विकता, पवित्रता, साफ सफाई, निजता और शाकाहारिता कायम रखने के लिए बिश्नोई धर्मपंथ का नियम **'करै रसोई हाथ सूं आन सूं पला न लावै'** का, जहां तक संभव हो सके पालन करना चाहिए क्योंकि इस नियम का पालन हमें बीमारियों और संक्रमणों से बचाता है इसमें कोई संदेह नहीं है।

हां ये अलग बात है कि वर्तमान समय में इस नियम का पालन करना बहुत अधिक कठिन है क्योंकि इंसान की बहुत-सी मजबूरियां हो गई हैं। लेकिन ये बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि मजबूरी अलग बात है और स्वेच्छा अलग बात है इसलिए यदि कोई व्यक्ति स्वेच्छा से ही नियम का पालन नहीं करता है तो ये उचित नहीं है। स्कूल, कॉलेज, हॉस्पिटल, हॉस्टल नौकरी, व्यवसाय और विदेश इत्यादि में मजबूरी के कारण इस नियम का पालन बहुत कठिन है लेकिन फिर भी जितना हो सके उतना तो पालन किया ही जा सकता है और इतनी तसल्ली तो की ही जा सकती है कि जहां पर भोजन किया जा रहा है। उस जगह की शुद्धता सात्विकता पवित्रता साफ सफाई और शाकाहारिता की छानबीन तो कर ही लेनी चाहिए और ये भी पता कर लेना चाहिए कि भोजन बनाने वाला भोजन बनाते समय पान जर्दा तो नहीं थूक रहा है या बीड़ी सिगरेट हुक्का तो नहीं पी रहा है।

अपने घर का भोजन करना, (करै रसोई हाथ सूं)

कोरोना काल में भी सरकार ने लोगों को यही हिदायत दी कि वे जहां तक हो सके भोजन अपने घर का या घर के सदस्यों के हाथों द्वारा बनाया हुआ ही करें और बाहर का भोजन न करें (आन सूं पला न लावै) अर्थात् दूसरे शब्दों में हम ये कह सकते हैं कि **'करै रसोई हाथ सूं आन सूं पला न लावै'** वाले नियम का पालन करना किसी भी तरह के वायरस से बचने के लिए है।

मेडिकल साइंस ये कहती है कि एक स्वस्थ इंसान के हाथों में भी हरदम कई तरह के वायरस होते हैं और ये वायरस हाथ मिलाते समय एक दूसरे को स्थानांतरित हो सकते हैं। अपने घर के सदस्यों द्वारा बनाए गए या अपने हाथों से बनाए गए भोजन की जितनी तसल्ली होती है, उतनी बाहर के भोजन की या अन्य किसी के हाथों द्वारा बनाए गए भोजन की तसल्ली नहीं होती।

गुरु जम्भेश्वर भगवान ने स्वयं बिश्नोई समाज को ये नियम पालन करने का आदेश दिया था और उनतीस नियम गुरु जम्भेश्वर भगवान द्वारा दिए गए सुझाव नहीं हैं, बल्कि आदेश हैं क्योंकि धर्मनियम कभी भी सुझाव नहीं होते बल्कि आदेश होते हैं।

कोरोना काल में सरकार ने ये हिदायत भी दी थी कि किसी अन्य के घर का, या बाहर का, या बिना तसल्ली का या बिना जांचे परखे कहीं पर भी भोजन नहीं करना चाहिए अर्थात् 'आन सूं पला न लावै' ये सरकारी हिदायत और 'आन सूं पला न लावै' वाला नियम भी छूआछूत का द्योतक नहीं है बल्कि शुद्धता और निजता के लिए है और किसी भी तरह के संक्रमणों से बचने के लिए है।

कोरोना काल की सरकारी हिदायत थी कि आदमी से आदमी को आपस में दो गज की दूरी रखना है और किसी भी अनजान व्यक्ति का पल्लू भी छूने नहीं देना है (आन सूं पला न लावै)। किसी भी अनजान व्यक्ति को अपने नजदीक नहीं आने देना है और उसे कम से कम दो

गज दूरी पर ही रखना है। ये सरकारी हिदायत और 'आन सूं पला न लावै' वाला नियम किसी से भी छूआछूत करने के लिए नहीं है बल्कि अपनी निजता शुद्धता और सुचिता रखने के लिए है।

कोरोना काल की सरकारी हिदायत ये भी थी कि यदि आप किसी वस्तु या किसी आदमी का स्पर्श कर भी लेते हैं तो उसी समय खुद को सेनेटाइजर से स्प्रे कर के सेनेटाइज कर लेना चाहिए ताकि छूने से स्थानांतरित हुए वायरस मर सकें। कोरोना काल की सरकारी हिदायत थी कि किसी से हाथ नहीं मिलाना बल्कि हाथ जोड़ कर ही अभिवादन या नमस्कार करना है। किसी से भी हाथ न मिलाने का अर्थ भी छूआछूत करना नहीं है बल्कि संक्रमणों से बचने के लिए ही है। ये अलग बात है कि शिष्टाचार के नाते हाथ भी मिलाना पड़ता है लेकिन फिर भी सबसे उत्तम अभिवादन प्रणाली दोनों हाथ जोड़ कर विनम्र प्रणाम करना ही है।

कोरोना काल की सरकारी हिदायत ये भी थी कि किसी दूसरे का या दूसरे को अपना पल्लू भी छूने न देना ताकि यदि किसी के वस्त्र पर भी किसी तरह का वायरस है तो वो आपको न लग जाए। कोरोना काल की सरकारी हिदायत थी कि किसी दूसरे द्वारा छुई हुई वस्तु या सरफेस अर्थात् सतह को छूना नहीं है। क्योंकि आपको ये पता नहीं है कि जिस जगह पर आप बैठने जा रहे हैं या छूने जा रहे हैं वो जगह शुद्ध है या वहां पर कोई वायरस से संक्रमित व्यक्ति या किसी छूत की बीमारी से ग्रस्त व्यक्ति कुछ देर पहले बैठा था या नहीं। इसलिए किसी भी जगह पर बैठने से पहले या उस सतह को छूने से पहले उसे साफ करना चाहिए शुद्ध करना या सेनेटाइज करना चाहिए या पानी का छींटा मारना चाहिए।

कोरोना काल की सरकारी हिदायत थी कि बाहर से आकर हाथ धोना या सेनेटिजर का छींटा मारना चाहिए (हमारे पूर्वज भी ऐसा करते थे और पानी का छींटा मारते थे)। कोरोना काल की सरकारी हिदायत थी कि जहां भी बैठो उस जगह को भी सेनेटाइजर का छींटा मार कर बैठना या साफ करके झाड़ पोंछ कर बैठना चाहिए। कोरोना काल की सरकारी हिदायत थी कि बाहर से आकर पहने हुए कपड़े उतार कर दूसरे साफ कपड़े पहनना और हो सके तो नहाना।

कोरोना काल की सरकारी हिदायत थी कि बाहर से आकर जूते तक भी अंदर न लाना, मास्क लगाना, अकेले भोजन करना अर्थात् अपने अलग बर्तन में भोजन करना, इत्यादि।

ये उपरोक्त कोरोना काल की सरकारी हिदायतें- **'करै रसोई हाथ सूं आन सूं पला न लावै'** वाले नियम के ही शत प्रतिशत अनुरूप लगती हैं और केवल व्याख्या या भाषा या नाम का ही अंतर लगता है। हमारे नियम का नाम **'करै रसोई हाथ सूं आन सूं पला न लावै'** है और कोरोना काल की सरकारी हिदायतों का नाम कोरोना एपरोपरीएट बिहेवियर है।

कोरोना वायरस के इलावा भी इंसान के हाथों में अनेक वायरस होते हैं जिनसे बचने के लिए ये सावधानियां जरूरी हैं और इसके इलावा शुद्ध सात्विक शाकाहारी और अपने घर समाज के लोगों के भोजन का भी बहुत बड़ा महत्व होता है क्योंकि तसल्ली होती है और इसी उपलक्ष में ही करै रसोई हाथ सूं आन सूं पला न लावै वाला नियम है। इसलिये न तो कोरोना काल वाली सरकारी हिदायतें किसी से भी छुआछूत करना थी और न ही बिश्नोई धर्मपंथ का नियम **'करै रसोई हाथ सूं आन सूं पला न लावै'** वाला नियम ही छुआछूत का द्योतक है बल्कि ये तो निजता शुद्धता सात्विकता और शाकाहारिता कायम रखने के लिए है और निजता रखना सभी का अधिकार भी है वो चाहे धर्मनियमों के पालन की निजता हो या शुद्धता के लिए निजता हो, पूजा पद्धति की निजता हो, रीती रिवाज की निजता हो, खानपान की निजता हो, समाज और धर्मपंथ की मर्यादा की निजता हो या धार्मिक स्थलों की निजता हो।

अपवाद स्वरूप नियमों का उल्लंघन करने वाले लोग भी हर समाज में मिल जाएंगे इसलिए उन चंद लोगों का उदाहरण देकर नियमों को दोष नहीं देना चाहिए। अपने नियमों का पालन नियमानुसार करके जीवन को स्वस्थ एवं सफल बनाना चाहिए।

-मा. मोतीराम कालीराणा
ग्राम श्री लक्ष्मण नगर, पोस्ट चाडी,
जिला फलोदी (राज.) 342312
मो.: 9783338265

e^[ktMh* ,d dYi o{kg

मैं खेजड़ी हूँ। मैं ज्यादातर थार रेगिस्तान में पाया जाता हूँ। मुझे राजस्थान का 'कल्प वृक्ष' कहा जाता है। मैं रेगिस्तानी जलवायु में जीवित रह सकता हूँ, इसलिए यहां के लोग मुझे रेगिस्तान का राजा कहते हैं। पंजाब और हरियाणा में मुझे जांटी, दक्षिण भारत में जम्मी और गुजरात में सिजेरो के नाम से जाना जाता है। वेदों में मुझे पवित्र वृक्ष शमी के नाम से जाना जाता है। अलग-अलग जगहों पर अलग-अलग त्योहार पर मेरी पूजा की जाती है।

राजस्थान सरकार ने मुझे सुरक्षित करने के लिए कई कदम उठाए हैं। 31 अक्टूबर 1983 को मुझे अधिकारिक रूप से राजस्थान का राज्य वृक्ष घोषित किया गया। मेरे महत्व को देखते हुए हिंदू धर्म में मुझे विशेष वृक्ष का दर्जा मिला हुआ है।

मेरे पत्तों को लूंग या लूम कहते हैं और ये मवेशियों के चारे के लिए बहुत फायदेमंद होते हैं। मैं सालाना 30-35 किलोग्राम चारा दे सकता हूँ। यहां के लोग मेरे पत्तों का इस्तेमाल पशुओं के चारे के लिए करते हैं। मेरी फलियों को सांगरी कहते हैं, सांगरी से सब्जी बनाई जाती है। यह सब्जी स्वादिष्ट होती है और इसे 3-4 दिनों तक खाया जा सकता है। इन फलियों को सूखने पर इसे खोखा कहा जाता है जो सूखे मेवे कहा जाता है। विक्रम संवत् वर्ष 2025 (1956 ई.) में भीषण अकाल के दौरान यहाँ के लोगों ने मेरी छाल उतारी और उसे भोजन के रूप में इस्तेमाल किया। मेरी छाल बहुत उपयोगी है। आयुर्वेद में मेरी छाल के मेदे का उपयोग कफ और पित्त को दूर करने में फायदेमंद माना जाता है। इसके अलावा, मेरी छाल का काढ़ा खांसी और फेफड़ों की सूजन को दूर करता है, बिच्छू के डंक में भी छाल के मेदे का लेप लगाने से आराम मिलता है। मेरी सूखी छाल का प्रयोग यज्ञ में आहुति के लिए किया जाता है, शादी विवाह में शुभ शकुन के लिए टहनी तोड़कर लाई जाती है। मेरी पत्ती, जड़, तना सब उपयोगी हैं।

आज विकास के नाम पर इंसानों ने मेरे परिवार को तबाह कर दिया है और ऐसा करना जारी रखे हुए है। मैं कहना चाहता हूँ कि लोग मेरे एहसानों को भूल गए हैं और मुझे बर्बाद करने पर तुले हुए हैं। मुझे आज ही बचाने की जरूरत है, अन्यथा भविष्य में इस रेगिस्तान में जीवित प्राणियों का अस्तित्व मुश्किल में पड़ जाएगा। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि सोलर पार्क नहीं बनाए जाने चाहिए, मैं यह कह रहा हूँ कि विकास के नाम पर मेरा विनाश न हो। मैं उन लोगों का साथी हूँ, मैं उनके साथ रहना चाहता हूँ।

वर्तमान समय में भौतिकवाद के कारण उजड़ते मेरे परिवार का कारण किसान अपने कृषि क्षेत्र में काम मेहनत न करके उसके बदले बिना मेहनत के पैसे वसूलने के कारण जो जमीन अपने लिए पुरुषों ने बचा करके रखी थी। उसी जमीन को सोलर कंपनी को गिरवी रख करके पैसा धन कमाने के कारण और सोलर कंपनी द्वारा सोलर प्लांट लगाने के लिए मेरे बहुत बड़े परिवार को काटकर विनाश की कागार पर खड़ा करने का दोषी आप लोग सभी है। समय रहते हुए संभल गए तो सब ठीक है। नहीं तो आने वाले समय में यही प्रकृति तुम्हें झुलस-झुलस कर मरने को मजबूर कर देगी।

हाँ, मैं सब बातें करते करते भूल ही गया कि गुरु जाम्भोजी के बताए नियम '**रूंख लीलो न घावै**' का अनुसरण करते हुए 12 सितम्बर, 1730 (वि.सं. 1787) में भादवा सुदी दशमी को मेरे परिवार को कटाई से बचाने के लिए 363 बिश्नोई शहीद हो गए, जिसे खेजड़ली खड़ाणा के नाम से जाना जाता है। मैं उन शहीदों को बारम्बार प्रणाम करता हूँ।

-**श्रीराम गोदारा बिश्नोई**, अध्यापक
(जालूवाला फलोदी)
आजाद शिक्षण संस्थान, धरनोक (बीकानेर)
मो.: 9672287830

बिश्नोई समाज के प्रमुख धाम

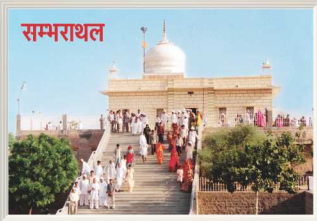

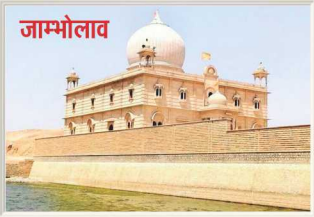

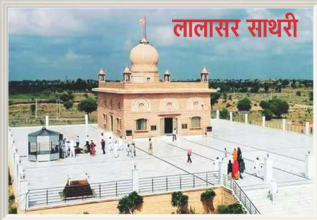

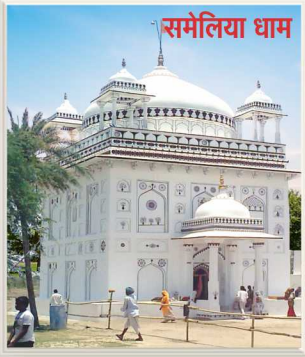

जाम्भाणी पर्व एवं अमावस्या

सम्वत् 2082 माघ की अमावस्या	सम्वत् 2082 फाल्गुन की अमावस्या
लगेगी- 17.01.2026 शनिवार रात्रि 12 बजकर 04 मिनट पर	लगेगी- 16.02.2026 सोमवार सायं 5 बजकर 35 मिनट पर
उतरेगी- 18.01.2026 रविवार रात्रि 01 बजकर 21 मिनट पर	उतरेगी- 17.02.2026 मंगलवार सायं 5 बजकर 31 मिनट पर

शहीद बीरबलराम खिचड़ मेला: (17.12.2025, बुधवार) लोहावट (फलौदी)। **पौष अमावस-** (19.12.2025 शुक्रवार) गाडरवाड़ा (नरसिंहपुर) मध्यप्रदेश। **महाशिवरात्रि:** 15.02.2026, रविवार। **फाल्गुन अमावस-** (17.02.2026 मंगलवार) मुकाम, सम्भरालि, पींपासर, कांठ, जातीवाल धोरा, लोहावट, सोनड़ी, मेधावा, भींयासर। **चन्द्रग्रहण-** 03.03.2026 (मंगलवान) दिन में 3.20 से सायं 6.47 बजे तक।

RNI No. : 12406/57
POSTAL REGD. NO. :

POSTAGE PREPAID IN CASH
POSTED AT : HISAR H.O.
POSTING DATE : 1st OF EVERY MONTH

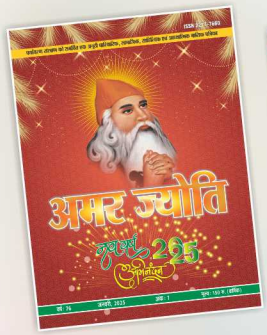

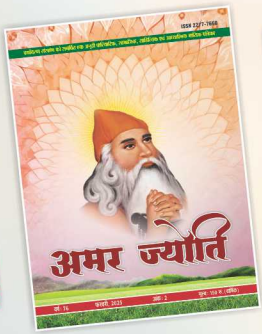

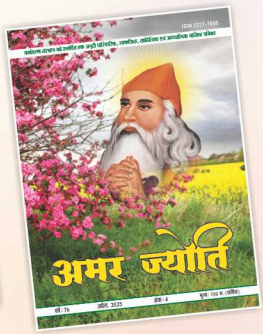

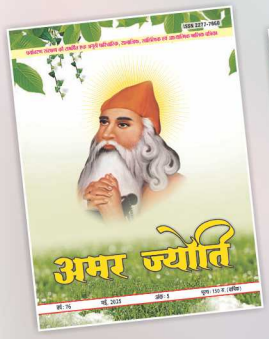

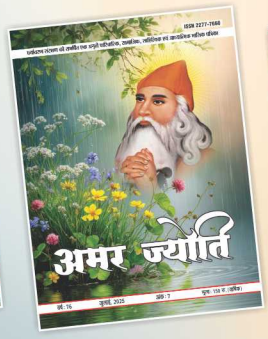

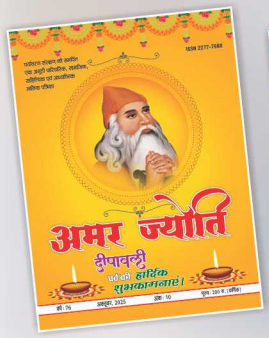

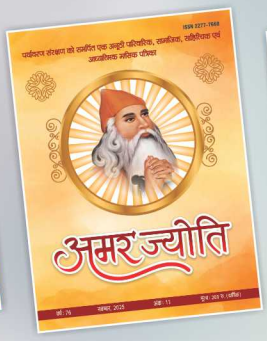

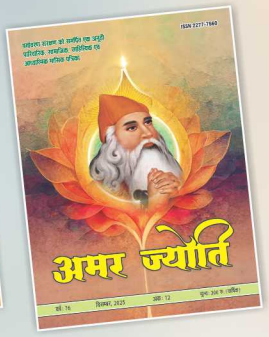

मुद्रक, प्रकाशक जगदीश चन्द्र कड़वासरा, प्रधान, बिश्नोई सभा हिसार ने डोरेक्स ऑफसेट प्रिंटर्स, हिसार से बिश्नोई सभा, हिसार के लिए मुद्रित करवाकर 'अमर ज्योति' कार्यालय, श्री बिश्नोई मन्दिर, हिसार से दिनांक 1 जनवरी, 2026 को मुख्य डाकघर, हिसार से प्रेषित किया।

DOREX® Printers 9896011117